चन्दामामा
जुलाई १९९३

Parry's
Lacto King

जुलाई १९९३

★

अगले पृष्ठों पर

★

एक प्रति : ४ रुपये

वार्षिक चन्दा : ४८ रुपये

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

पुस्तकों से मित्रता

आजकल पठन को लेकर बहुत कुछ बताया जा रहा है, विशेषकर बच्चों के पठन के संबंध में। यहाँ जानने योग्य कुछ दिलचस्प तथ्य हैं। संसार में अधिकाधिक पुस्तक प्रकाशित होनेवाले देशों में भारत का आठवाँ स्थान है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि सामान्य भारतीय पठन में पर्याप्त उत्सुकता रखता है। वह वर्ष में ३५ पृष्ठों से कम पढ़ता है अथवा १०,००० शब्द। शिक्षित समस्त देशों में सर्वेक्षण करने के उपरांत यूएनइस्को ने सिफ़ारिश की है कि साल में कम से कम २,००० पृष्ठों का पठन होना चाहिये।

क़रीब-क़रीब ७४०,००० स्कूल देश-भर में हैं, लेकिन उसमें ४० प्रतिशत स्कूल ही पुस्तकालय चला पाते हैं। जहाँ पुस्तकालयों की सुविधाएँ नहीं है, वे अधिकतर प्राथमिक पाठशालाएँ और वे संस्थाएँ हैं-जो पंचायतों के द्वारा स्थापित और चलायी जा रही हों। इनमें बहुत-सी नगरपालिकाएँ, निगम और स्वयं सरकार भी शामिल है। ऐसे स्कूलों में पुस्तकालय चलाने के लिए या तो पर्याप्त धन नहीं है अथवा उसको चलाने स्थल का अभाव है। अच्छा, अब हम यह सब भूल जाएँ और देखें कि जिन स्कूलों में पुस्तकालय हैं, उनका उपयोग विद्यार्थी किस सीमा तक कर पा रहे हैं? और यह जानें भी कि उनका उपयोग सही माने में हो रहा है या नहीं।

अगर पुस्तकालयों में पर्याप्त मात्रा में पुस्तकें हों और विद्यार्थी उनको उपयोग में ला रहे हों तो उन्हें निरांटक इस सुविधा का लाभ उठाने देना चाहिये। इससे उनके पठन को प्रोत्साहन मिलता है। कुछ स्कूल ऐसे भी हैं जहाँ सप्ताह में एक बार एक घंटा या अधिक समय पुस्तकालयों के लिए अनिवार्य रूप से निर्णीत होता है, जहाँ सब विद्यार्थियों को पुस्तक-पठन का अवकाश प्राप्त होता है। विद्यार्थियों को सलाह दी जाती है कि जो पुस्तक वे ले जाते हैं उनके नाम दर्ज किये जाएँ और उस पुस्तक के बारे में अपने अभिप्राय भी बतायें। इससे वे पुस्तक-प्रिय बनते हैं और साथ ही इनका उपयोग उनके भविष्य-जीवन में होता है। अगर पुस्तकों से उनके संबंध बने रहें तो उनमें पुस्तक-पठन की आदत डालना बहुत ही सुलभ होगा। अतः स्कूलों के पुस्तकलायों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे विद्यार्थियों और पुस्तकों में मित्रता को स्थापित करें और उसे बढ़ावा दें।

स्कूल फिर से खुल गये हैं। शैक्षिक वर्ग शुरु हो चुके हैं। पुस्तकों के बारे में सोचने और उनके अध्ययन का यह सही समय है।

वर्ष : ४५ | जुलाई १९९३ | अंक : ११

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

पिडिलाइट लाए वॉटर कलर्स
पिडिलाइट
फ़ेविक्रिल®
Fevicryl
पिक्सी पैक
सरलता से छाएं मन को भाएं
everest/92/PIL/125 – hn
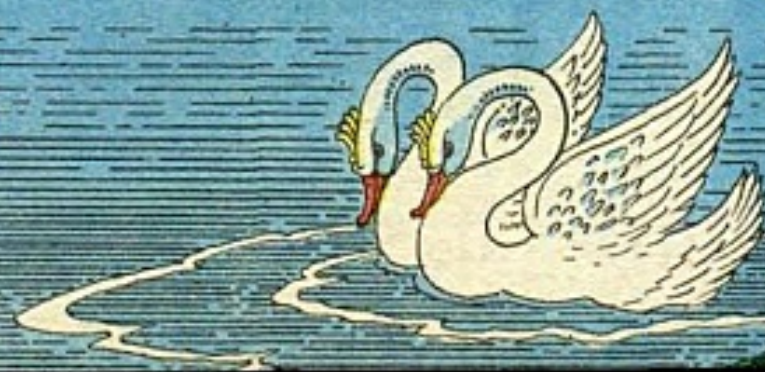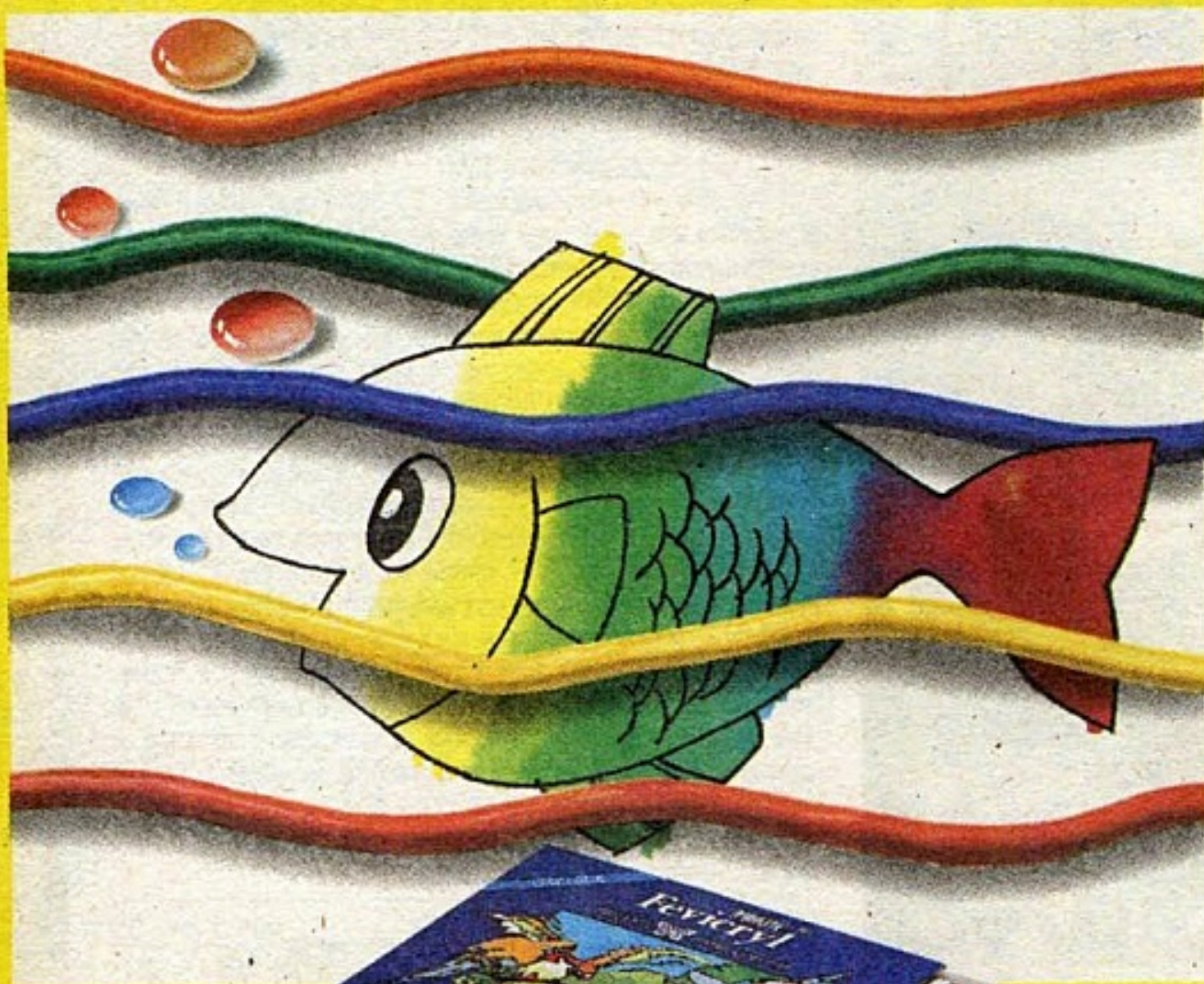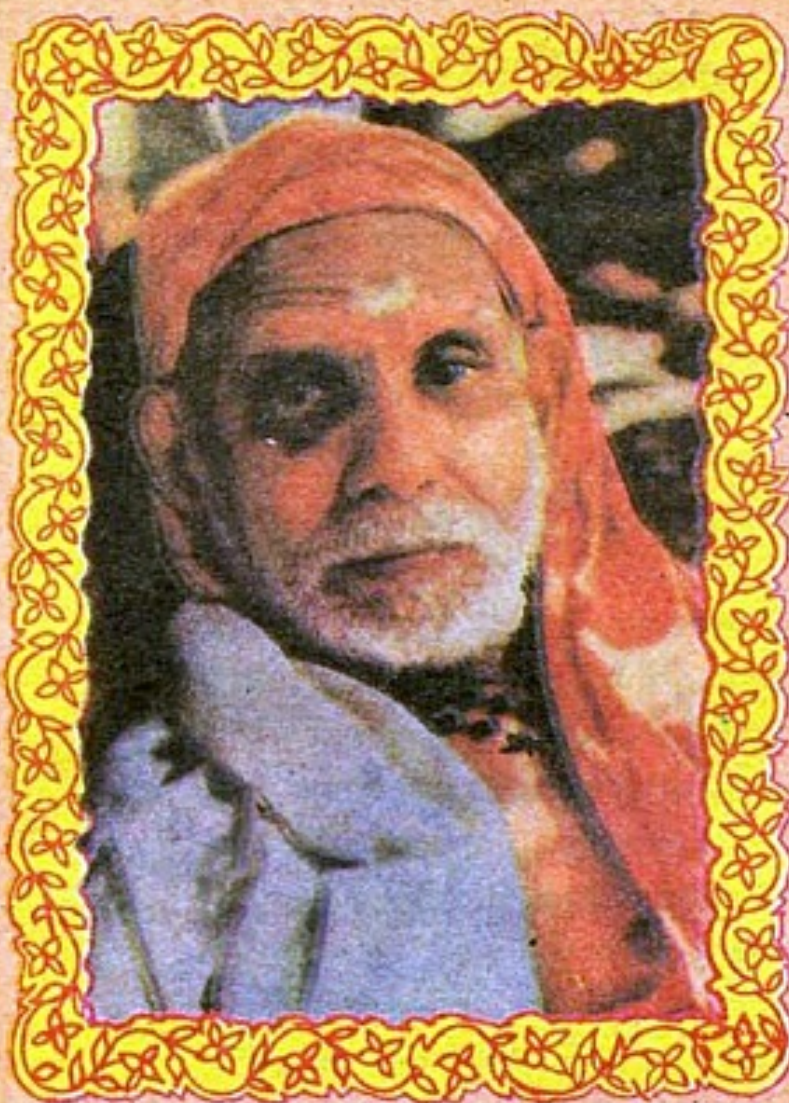
समाचार-विशेषताएँ

श्री कंचि कामकोटि पीठाधिपति

श्री कंचि कामकोटि पीठाधिपति श्री चंद्रशेखरेंद्र सरस्वती महास्वामी के शतजयंति के उत्सव १९९३ मई में आरंभ हुए। भक्तों ने निर्णय किया है कि ये उत्सव बडे धूमधाम से एक वर्ष तक मनाये जाएँ। कहीं भी कोई भी ऐसा प्रमाण नहीं मिलता, जिससे यह सिद्ध हो सके कि इतने सुदीर्घ काल तक श्रीचंद्रशेखरेंद्र स्वामी की तरह कोई, किसी भी मठ के पीठाधिपति रहे हों।

आज के ये परामाचार्य ८६ सालों के पहले आदिशंकर के वारिस के रूप में, कांचीपूर के मठ के ६८ वें शंकराचार्य नियुक्त हुए। इनकी यह नियुक्ति बडी विचित्र परिस्थितियों में हुई। ६६ वें आचार्य श्री चंद्रशेखर सरस्वती ने १९०६ में बारह वर्ष की उम्र के स्वामिनाथन नामक बालक को देखा। उस बालक की आँखों में प्रस्फुटित दिव्य शक्ति ने उन्हें बहुत ही आकर्षित किया। उस बालक में उन्होंने देखा कि इसमें जगद्गुरू होने के पर्याप्त लक्ष्मण हैं। अपने साथ ही रहनेवाले पंडितों से उन्होंने बताया कि यही बालक उनके बाद कंचि मठ का पीठाधिपति बनेगा।

इसके दूसरे ही साल ६६ वें आचार्य कंची के निकट ही के 'कलवै' नामक गाँव में परलोक सिधारे। उस समय स्वामिनाथन दिंडिवनम नामक एक छोटे-से शहर के एक क्रिशियन मिशनरी स्कूल में शिक्षा प्राप्त कर रहा था। स्वामिनाथन की बडी माँ का पुत्र पहले से ही पीठाधिपति के साथ रहते थे, इसलिए ६६ वें आचार्य की मृत्यु के बाद वे ६७ वें आचार्य नियुक्त हुए। अपने एकलौते पुत्र को भी मठ को समर्पित करने का निर्णय स्वामिनाथन की बडी माँ ने लिया, जो विधवा थी। इस विधवा को देखने और उसे सांत्वना देने के लिए स्वामिनाथन भी अपनी माँ के साथ कांचि आया।

जैसे ही माँ और पुत्र कंची पहुँचे, कंचीपीठ ही के एक सन्यासी ने पुत्र को माँ से अलग किया और 'कलवै' ले गया। बीच रास्ते में उसे ज्ञात हुआ कि वर्तमान पीठाधिपति का स्वास्थ्य बिलकुल ही बिगड़ गया है। इस स्थिति में उस सन्यासी ने स्वामिनाथन से आग्रह किया कि वे ६८ वें शंकराचार्य की जिम्मेदारियाँ संभालें और इस पदवी को स्वीकार करें। इसका अर्थ यह हुआ कि उस क्षण से उसे सारे पारिबारिक बंधनों को तोड़ना होगा, उनसे मुक्त होना होगा।

उस घटना का स्मरण जब उन्हें दिलाया गया तब परमाचार्य ने कहा "उन घटनाओं ने तो मुझे आश्चर्य में डाल दिया, जिनकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। बैलों की गाड़ी में बैठकर राम-स्मरण करते हुए शेष यात्रा मैंने पूरी की।"

तार द्वारा स्वामिनाथन ने इस जिम्मेदारी को अपने कंधों पर लेने की स्वीकृति अपने पिता से प्राप्त की। १९०७ फरवरी १३ को स्वामिनाथन कंचि कामकोटि पीठ के ६८ वें शंकरचार्य नियुक्त हुए। ६६ वें आचार्य के नाम को स्वीकार किया। चंद्रशेखरेंद्र सरस्वती युवक हैं। भविष्य में उन्हें बहुत से बड़े-बड़े कर्तव्यों का पालन करना है। इन कर्तव्यों और भारी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए विद्या और निष्ठा की नितांत आवश्यकता है। अतः वे एकांत में विद्याध्ययन करते, तपस्या करके अपने आप को इस पद के योग्य बनाते। उनमें लोक-कल्याण की तीव्र आकांक्षा है। रात-दिन वे निरंतर आध्यात्मिक साधना में मग्न रहे।

१९०९ से इक्कीस वर्ष तक संपूर्ण भारत देश में आदिशंकर की पद्धति में उन्होंने 'दिग्विजय' यात्रा की। दूरी कितनी भी हो, वे पैदल ही जाते थे। अनिवार्य हुआ, तभी वे पालकी में बैठकर यात्रा करते थे।

परमाचार्य पंडित हैं। उन्हें लाटिन, फ्रेंच, ग्रीक भाषाओं के साथ-साथ सत्रह भाषाओं में पांडित्य है। ग्रीक राजमाता ने कहा "वे निर्मल आध्यात्मिक स्वरूप हैं।" राजमाता की पुत्री ने कहा "उनका दर्शन संपूर्णता को दर्शन करना है।" यों उन दोनों ने अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को व्यक्त किया। एक अमीरीकी अग्र राजदूत ने परमाचार्य का वर्णन करते हुए कहा "वे सन्यासियों में राजा हैं।"

१९२७ में जब गाँधीजी और परमाचार्य परस्पर वार्तालाप कर रहे थे तब राजाजी ने आकर गाँधी जी को याद दिलाया "भोजन का समय हो गया है।" गाँधीजी ने कहा "आचार्यजी से वार्तालाप करना ही मेरे लिए सायंकाल का भोजन है।" साधारणतया, ८४ साल जीवित रहने का अर्थ है "हज़ार पूर्णिमाएँ" देखी हैं। इसलिए इस अवसर पर सुवर्ण शताब्दी अभिषेक मनाये जाने की रीति है। परंतु कंचि परमाचार्य पूरे सौ साल जीवित रहे हैं, इसलिए भक्तों ने उनके 'शताब्दी महोत्सव' बडे वैभव से मनाने का निश्चय किया है।

'जीवन ने मुझे क्या सिखाया है' नामक अपने एक लेख में उन्होंने कहा "मुझे जीवन ने यही एक बात सिखायी है और वह है-दूसरों के लिए जीने के लिए ही भगवान ने कुछ लोगों की सृष्टि की है"। उन्होंने यह लेख कुछ सालों पहले लिखा था।

परमाचार्य के उपदेश

विविध धर्मों के सिद्धांतों में, आचार-व्यवहारों में भेदों का होना सहज है। यह कोई त्रुटि नहीं है। यह कोई आवश्यक नहीं है कि सब एक ही प्रकार का आचरण और व्यवहार करें। परंतु धर्मों के बीच मैत्री का होना नितांत आवश्यक है। एकता बहुत ही प्रधान है।

आज विश्व में अनुशासन नही रहा, कोई भी कार्य क्रमानुसार नहीं चल रहा है। लक्ष्यहीन होकर काम किये जा रहे हैं। इस स्थिति में विश्व के उतार-चढ़ावों को सहकर जीना कठिन कार्य है। इस विषय में अनुशासन हमारी बहुत ही सहायता कर सकता है। अनुशासन की आदत डालना, उसको कार्यरूप में रखना हमारे जीवन का सब से उत्तम सुगुण सिद्ध होगा। अन्य लोगों को किसी प्रकार का कष्ट ना पहुँचाकर जब हम अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को सावधानी तथा भक्ति से निभायेंगे, तभी इस अनुशासन का आचरण संभव होगा। अच्छे कार्य करने के लिए ही यह अनुशासन हमें प्रोत्साहन देगा अतः इससे हमारे हृदय निर्मल और संतृप्त रहेंगे

सास-बहू

श्रीपुरं गाँव में भूषण नामक एक छोटा-सा किसान रहा करता था। उसकी पत्नी कामाक्षी बडे ही कटु स्वभाव की थी। जो मुँह में आता फट से बोल देती थी। भूषण ने पहले अपनी पत्नी को काबू में रखना चाहा। परंतु उसके नरम स्वभाव का फ़ायदा उठाकर कामाक्षी उसपर और ही अपना हुक्म चलाने लगी। बेचारा भूषण करता क्या? उसने चुप्पी साधना ही उचित समझा।

भूषण और कामाक्षी की तीन बेटियाँ और इकलौता बेटा था। दोनों बडी बेटियाँ और बेटा माँ कामाक्षी जो कहती, उसपर अपना सिर हिला देते। माँ के विरुद्ध कुछ कहने का उन्हें साहस ही नहीं होता था। इसलिए इन तीनों के बारे में कामाक्षी को कोई चिंता नहीं होती थी। तीसरी बेटी चंदना का स्वभाव अपने पिता के स्वभाव-सा था। वह किसी से भी ज्यादा बात नहीं करती थी। अगर किसी से बोलती भी तो उसमें भरपूर आत्माभिमान और आदर की भावनाएँ होती थीं। बचपन से ही कामाक्षी ने भरसक कोशिश की कि वह अपनी बेटी को अपने स्वभाव के अनुरूप बनाये। वह चाहती थी कि वह बेटी भी उसका कहा माने और उसी की तरह दर्प, अहंकार और लापरवाही से सब से व्यवहार करे। उसके इस प्रयत्न में उसे सफलता तो नहीं मिली, परंुत हाँ, अवश्य ही थोडा-सा परिवर्तन उसमें अवश्य हुआ। अब वह काम करनेवालों की बेइज़्ज़ती करती, उन्हें बात-बात पर दुतकारती। बडों के साथ अनादर के साथ पेश आती, उनकी अवहेलना करती। अपनी इस बेटी के भी व्यवहार से भूषण बहुत ही दुखी हुआ।

चंदना जब जवान हो गयी, तब कामाक्षी

–सुलोचना

ने अपने पति की स्वीकृति लिये बिना ही केशव नामक एक युवक से चंदना का विवाह रचाने का निश्चय किया। केशव पढ़ा-लिखा था, सरकारी नौकरी कर रहा था। उसके पिता कभी के दिवंगत हो चुके थे। उसकी माँ और एक बहन थी। बहन की शादी भी हो गयी और वह किसी दूसरे गाँव में अपने पति के साथ रहती थी। केशव उतना संपन्न तो नहीं था, लेकिन उसपर कोई बोझ भी नही था। कहा जाए तो पारिवारिक जिम्मेदारियों से वह मुक्त था। इसलिए कामाक्षी ने सोचा कि उससे शादी करने से उसकी बेटी सुखी रह सकती है।

एक दिन चंदना की सहेली विमला उससे मिलने कामाक्षी के घर आयी। एक साल पहले ही विमला की शादी हो चुकी थी। जब दोनों सहेलियाँ आपस में बातों में मग्न थीं, तो कामाक्षी ने उनके वार्तालाप में दख़ल देते हुए विमला से पूछा "विमला, कैसा चल रहा है तुम्हारा परिवार?"

विमला ने कह तो दिया कि मेरा दांपत्यजीवन सुख से चल रहा है। उसके इस उत्तर से कामाक्षी संतृप्त नहीं हुई। वह उससे सवाल पर सवाल करती। आख़िर उसे वे सारी बातें मालूम हो गयीं, जिन्हें वह जानना चाहती थी। दूसरों से सवाल करके जानकारी प्राप्त करने की पटुता कुछ औरतों में ख़ास तौर से होती है। कामाक्षी इस कला में बडी ही प्रवीण थी। यही वजह है कि वह विमला से उसके परिवार की गतिविधियाँ जान पायी। वे यों थीं।

विमला की सास बात-बात पर नाराज़
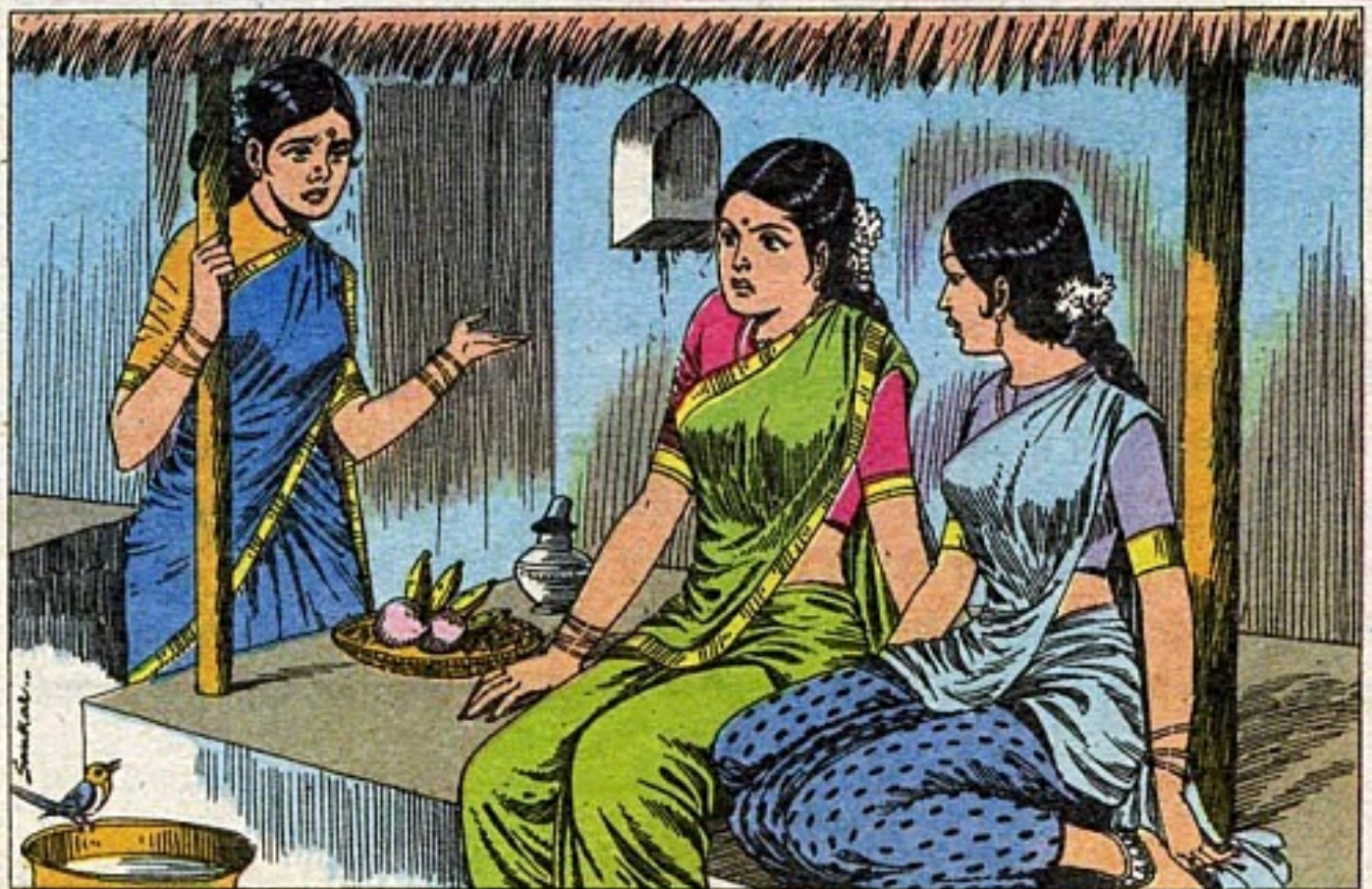
होती थी । बहू जो भी काम करे, उसे पसंद नहीं आता था । विमला को इससे दुख पहुँचता । फिर भी वह नहीं चाहती थी कि सास के दिल को ठेस पहुँचे, इसलिए सास जैसा चाहती, वैसा ही करती । वह सास से झगड़ा करके पारिवारिक शांति में अशांति पैदा करना नहीं चाहती थी । वह आख़िर भला कब तक चुप रह सकती थी? आख़िर उसने एक दिन अपने पति से सास की शिकायत की और सविस्तार बताया कि किस-किस प्रकार की मुसीबतों से वह गुज़र रही है । उसका पति सिर्फ इतना ही कहकर चुप रह गया "माँ जैसा कहती है, वैसा करो ।"

यह सुनकर कामाक्षी ने विमला से कहा "बहू को सास के घर हमेशा कड़ाई के साथ ही व्यवहार करना चाहिये । ईंट का जवाब ईंट से ही देना चाहिये । दबकर रहने से ऐसा ही होता है । अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो विमला पर जो गुज़र रहा है, वही तुम पर भी गुज़रेगा । समझे?"

चंदन की शादी धूमधाम से केशव से हुई । उसकी सास बडे ही शांत स्वभाव की थी । सबसे वह बडे प्यार से व्यवहार करती थी, लेकिन कोई ग़लती करते तो वह बिलकुल ही सहती नहीं थी ।

जिस दिन चंदना अपना परिवार बसाने ससुराल आयी, उस दिन शाम को उसकी सास पार्वती रसोई-घर में काम पर लगी हुई थी । उसने वहीं से बहू को बुलाकर कहा "अंधेरा हो रहा है । दीप जलाओ ।"

फिर भी चंदना ने दीप नहीं जलाया ।
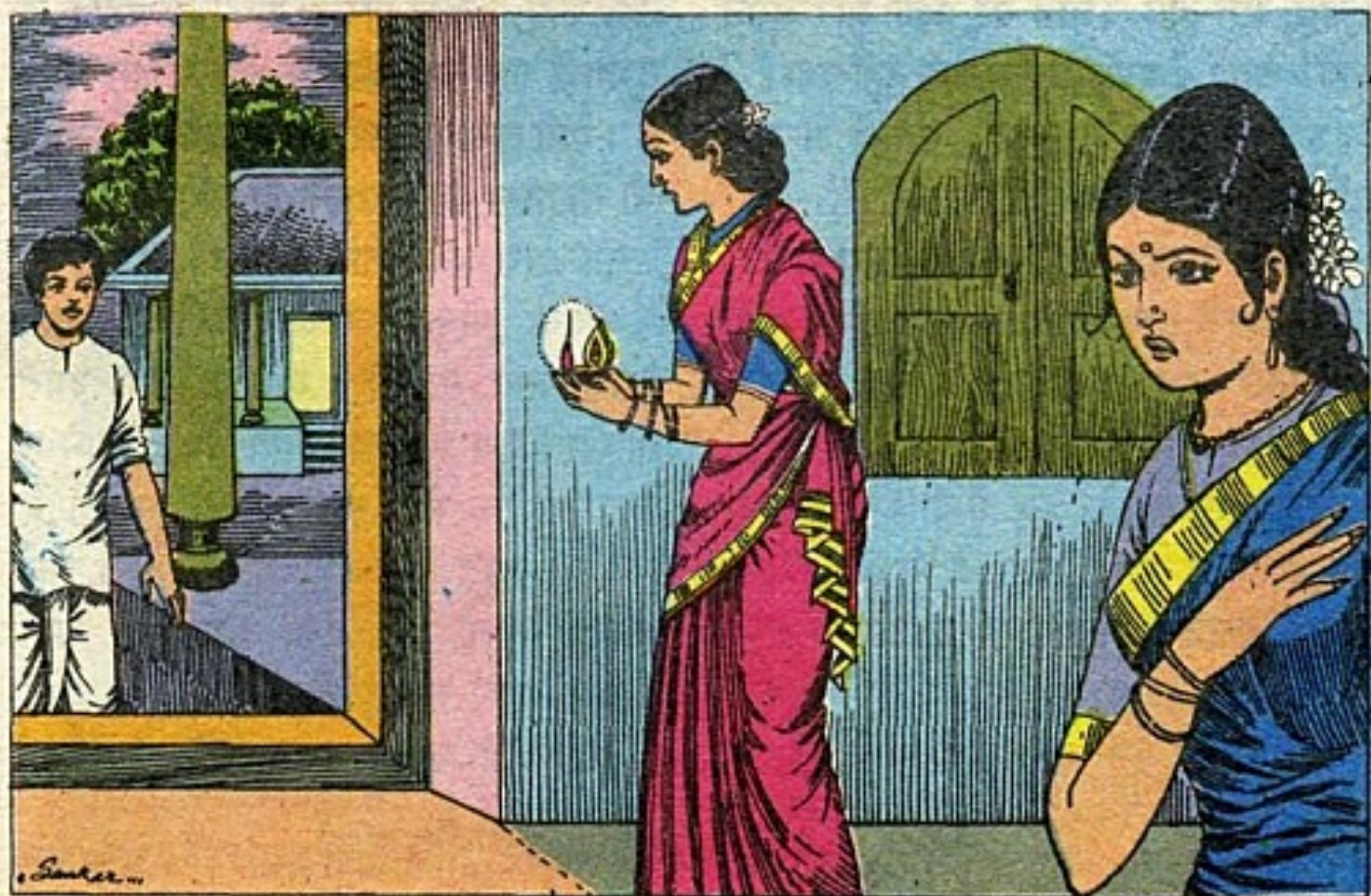
थोडी देर बाद सास रसोई-घर से बाहर आयी । खुद दीप जलाया और बहू से कहा "बहू, मैंने दीप जलाने को कहा और तुमने नहीं जलाया । क्यों, तुम्हें सुनायी नहीं पडा ? "

इसपर चंदना ने कहा "मायके में मेरी माँ मुझसे कोई काम नहीं कराती ।"

पार्वती ने कहा "वह तुम्हारा मायका है । वहाँ तुम्हारी गिनती छोटी लड़कियों में होती है । वहाँ कुछ भी ना करो, चलता है । यह तो तुम्हारा ससुराल है ।"

तभी से सास और बहू के बीच में प्रच्छन्न युद्ध प्रारंभ हो गया । सास जो भी कहे, चंदना उसके बिलकुल विपरीत ही करती थी । हाँ का ना और ना का हाँ कहती थी । पार्वती अपनी बहू के इस बरताव पर उसे कोसती थी, उसपर नाराज़ होती थी ।

केशव भाँप गया कि माँ-बहू में नहीं पड रहा है, दोनों में मन-मुटाव है । उसे मालूम था कि इसमें उसकी पत्नी की ही ग़लती है । चंदना को डाँटता तो वह रूठ जाती थी । इस प्रकार पति-पत्नी में भी झगड़े होने लगे ।

इन परिस्थितियों में विमला अपनी सहेली चंदना के घर आयी । यह देखने कि ससुराल में उसका जीवन कैसे व्यतीत हो रहा है ?

चंदना ने विमला से बिना कुछ छिपाये वे सारी बातें बतायीं, जो अब तक वहाँ हुईं । उसने कहा "मेरी सास की वजह से मेरे और मेरे पति में झगड़े भी होने लगे हैं ।"

विमला को उसकी इन बातों पर बडा आश्चर्य हुआ । उसने सहेली से अपना आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा "अरी नादान चंदना, तुम बडी भोली-भाली हो । तुमने जो कुछ कहा, उसका सारांश यही निकलता है कि तुम्हारी सास बडी ही नेक और उत्तम औरत है । ऐसी सास पाने पर तुम्हारे भाग्य की जितनी भी सराहना करूँ, उतनी ही कम है । तुम्हीं उसके साथ कर्कशता से पेश आ रही हो ।"

चंदना थोडा रुककर बोली "तुम्हारा कहना क्या सही है? याद है, मेरी शादी के पहले तुम मेरे घर आयी थी । तुमने तो कहा था कि मेरी सास जो भी कहती है, मैं ठीक तरह से करती हूँ, पर मेरी सास हमेशा मुझसे बुरा-भला कहती ही रहती है, हर काम की नुक्ताचीनी करती रहती है । तेरी ये बातें सुनकर मेरी माँ ने मुझे

एक सलाह दी । उसने मुझसे कहा कि सास की हर बात पर सिर मत हिलाना, उसे अपने काबू में रखना । माँ के इस उपेदश को सौ फ़ी सदी अमल में ला रही हूँ ।"

इस पर विमला और भी ताज्जुब प्रकट करती हुई बोली "मेरी और तुम्हारी सास में कोई समानता है ही नहीं । तुम अपने ससुराल आयी हो । अब यहाँ अपने मायके को भूल जाओ । तेरी माँ ने तुम्हें जो अनुचित सलाहें दी, उन्हें भुला दो । जान-बूझकर अपने परिवार को आग में मत झोंको ।" चंदना ने उसकी बातें बडे ध्यान से सुनीं और कहा "अच्छा, कुछ समय तक तेरी सलाहें अमल में लाऊँगी । देखती हूँ, क्या नतीजा निकलता है" । फिर विमला को बिदा किया ।

दूसरे ही दिन चंदना सबेरे-सबेरे जागी, नहाया, और रसोई-घर में प्रवेश किया । पार्वती यह देखकर बहुत ही खुश हुई कि जो बहू कभी सबेरे उठकर नहाती ही नहीं थी, वह नहाकर रसोई पकाने रसोई-घर में आयी हुई है ।

तीसरे दिन पार्वती आँगन को साफ करके चौक डालने आयी तो चंदना ने अपनी सास से कहा "सासजी, चौक मैं पूरुँगी ।"

पार्वती अपने बहू में हुए परिवर्तन से इतनी खुश हुई कि गली में से गुजरते हुए हर एक से कहती "देखो, मेरी बहू ने चौक पूरकर आँगन को कितनी अच्छी तरह से सजाया है ।"

सास के इस व्यवहार से चंदना में उसके प्रति आदर का भाव जगा । उसकी दृष्टि में सास एक आदर्श सास है, उत्तम स्त्री है ।

कुछ समय बाद चंदना गर्भवती हुई । यह जानकर पार्वती ने खुशी के मारे क्या-क्या नहीं किया? वह बहू को पलंग से नीचे कदम ही नहीं रखने देती थी । खुद खाना पकाती और थाली में ले जाकर उसे देती । चंदना ने एक दिन हँसी-हँसी में कहा "सासजी, लगता है कि मुझसे खाना नहीं खाया जायेगा ऐसा सोचकर आप स्वयं मुझे अपने ही हाथों खिलायेंगी भी ।"

उसकी इस बात पर पार्वती मंद मुस्कान करती हुई "हाँ चंदना, तुम जैसी अच्छी बहू मिल जाए तो कोई भी सास यही काम करेगी ।" बोली ।

हिंसा की प्रवृत्ति

विधूतिपुरि का राजा विकटसेन स्वयं हिंसात्मक स्वभाव का था । युद्ध करना, पकडे गये बंदियों की मार-काट, पूजाओं के नाम पर अनेकों मूक जीवों की बलि चढ़ाना उसकी आदतें थी ।

मंत्री धर्मकीर्ति के हितवचन विकटसेन एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देता था । 'यथा राजा तथा प्रजा' की तरह लोगों में भी हिंसा की प्रवृत्ति अधिकतर होती गयी ।

ऐसे समय पर मंत्री के निमंत्रण पर सत्यानंद नामक एक बडा साधु राजा को देखने आया । उसने राजा को पुराणों, उपनिषदों, श्रुतियों और स्मृतियों की अनेकों विशिष्टतायें, कथाओं के रूप में सुनायी और बताया कि अहिंसा मनुष्य की कितनी श्रेष्ठ प्रवृत्ति है । बडी ही रुचिकर पद्धति में उसने राजा को बताया कि हिंसा को क्यों त्यागना चाहिये?

राजा विकटसेन ने हाथ जोडकर साधु से कहा "स्वामी, आप मेरे गुरु हैं । आज्ञा दीजिये कि आपको मैं क्या दक्षिणा दूँ ।"

साधु ने मुस्कुराते हुए कहा "राजा, तुम्हारे राज्य में हिंसा तांडव नृत्य कर रही है । तुम और तुम्हारी प्रजा हिंसा का त्याग करें । वही मेरे योग्य गुरुदक्षिणा है ।" 'अवश्य' कहते हुए राजा विकटसेन ने सेनाधिपति को बुलाकर कहा "सेनाधिपति, आज से राज्य में सबको अहिंसा का पालन करना होगा । मेरी यह आज्ञा तुरंत अमल में लायी जाए । मुनादी पिटाकर नागरिकों को सावधान कीजिये । जनता में किसी ने अगर अहिंसा का पालन नहीं किया, हमारी आज्ञा का उल्लंघन किया तो उसे वहीं बिना किसी झिझक के मार डालिये, वध कर दीजिये । यही हमारी आज्ञा है ।"

मंत्री धर्मकीर्ति और साधु सत्यानंद राजा की इस आज्ञा पर एक दूसरे को अचरज से देखने लगे ।

—बी. किशोर

विचित्र पुष्प

२
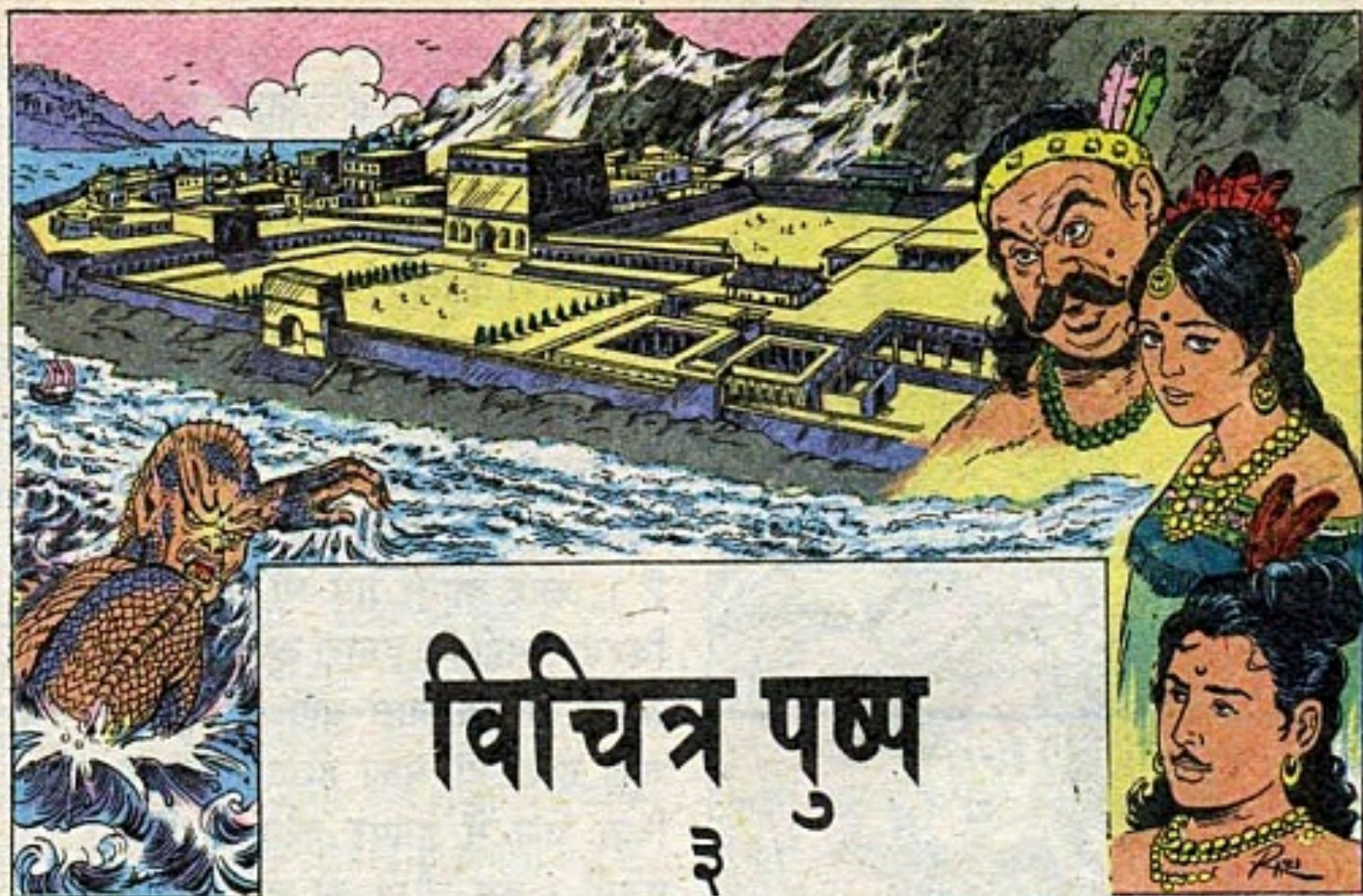
राजगुरु गौरीनाथ ने राजा प्रतापवर्मा और राजकुमारी प्रियंवदा को 'शताब्दिका' पुष्प के शाप का विषय पूरा-पूरा बताया । सेनाधिपति गंभीरवर्मा ने माणिक्यपुरी के राजा को बताया कि दक्षिणी प्रांत में समुद्रीतट के गाँव और वहाँ के घर धराशायी हो गये हैं । प्रजा भयभीत होकर तितर-बितर होकर भाग रही है ।

—बाद

कोई भी यह जान नहीं पाया है कि समुद्री तट के गाँव क्यों धराशायी हो गये हैं? किसी को कुछ मालूम ही नहीं हो पाया कि आख़िर ऐसा हुआ क्यों है? उस दिन की रात प्रशांत थी । ना ही वर्षा हुई और ना ही समुद्री लहरों में उफ़ान आया । सबेरे जागने के बाद देखा कि सब घर गिर चुके हैं । हर कोई सोचने की कोशिश करता रहा कि क्या हुआ है, पर कोई किसी निर्णय पर ना आ पाता था । बस, उनको अपने जीवन का डर था, किसी तरह बचकर वहाँ से निकल जाने की जल्दी थी । उनको लग रहा था कि थोडा-सा समय भी वहाँ रहने से उनकी जान को ख़तरा हो सकता है । भयभीत जनता लक्ष्यहीन होकर छिन्नाभिन्न होने लगी ।

भागे हुए ऐसे कुछ भयभीत लोग राजधानी पहुँचे । नगर-द्वार पर जो सैनिक तैनात थे,

उन्होंने इसकी ख़बर सेनाधिपति को दी । सेनाधिपति के आज्ञानुसार वे सैनिक उन्हें शिबिरों में ले गये, जो उनके लिए विशेष रूप से बनाये गये थे । कुछ शरणार्थियोंने मंदिर के प्रांगण में शरण ली तो कुछ ने उस मैदान में, जहाँ पिछली रात को वसंतोत्सव संपन्न हुआ । यों शरणार्थियों ने रात गुज़ारी ।.

राजकुमारी प्रियंवदा अपनी सहेलियों के साथ इस प्रबंध-कार्य में लग गयी । उसने जाँचा कि राजप्रासाद का कौन-सा भाग शरणार्थी स्त्रीयों और बच्चों को ठहराने के लिए उपयुक्त होगा । निर्णय लेकर उसने ऐसी जगहें खाली करवायीं, जिससे बिना किसी कष्ट के शरणार्थी वहाँ ठहर सकें । इस काम के पूरे होते-होते आधी रात हो गयी ।

सबेरा होते ही राजा प्रतापवर्मा, सेनाधिपति गंभीरवर्मा के साथ शरणार्थियों के परामर्श के लिए निकले । राजा को देखते ही प्रजा ने बडी दीनता से कहा "घर-द्वार पशु—संपत्ति आदि सब कुछ छोडकर जैसे हैं, वैसे भागकर हम लोग, यहाँ पहुँचे हैं । महाराज, हम वापस जाने से भी ड़र रहे हैं । अगर वापस गये भी तो इसका कोई विश्वास नहीं कि हमारा कुछ वहाँ बचा है । हमारा तो विश्वास यही है कि वहाँ सब कुछ नाश हो चुका होगा । मालूम नहीं, किस क्षण में हमपर कौन-सी विपदा टूट पडेगी । हम लोगो की समझ में नहीं आ रहा है कि ऐसा क्यों हुआ? अवश्य ही यह कोई प्राकृतिक प्रकोप नही है । यह किसी छिपी शक्ति का ही कार्य लग रहा है, जो हमें बरबाद करने पर तुला हुआ है । आप नहीं तो कौन इस दुस्थिति में हमारी रक्षा कर सकते हैं ।"

"तुम लोगों की रक्षा का भार मुझपर है । तुम्हारे प्राण अथवा तुम्हारी संपत्तियों की कोई हानि नहीं होगी । आप लोग निश्चिंत रहिये" कहते हुए राजा ने उन्हें बडे प्यार से सांत्वना दी और सेनाधिपति की ओर देखा ।

"कल ही कुछ सैनिकों को दक्षिण-प्रांत में भेजा है । वे हर किसी मुसीबत का सामना करने सन्नद्ध होकर गये हैं । जिन ग्रामीणों ने अपना घर-बार छोडा है, जो जायदाद छोडी है, उसकी रक्षा की पूरी जिम्मेदारी

उन्हें मैंने सौंपी है। बारी-बारी से, मेरा मतलब सबेरे से शाम तक, शाम से सबेरे तक कुछ और लोगों को तैनात किया है, जो स्थिति पर निगरानी रखेंगे और समय-समय पर हमें सूचित करते रहेंगे। इसलिए इन्हें अपने घर और माल के बारे में चिंतित होने की ज़रूरत नहीं है" सेनाधिपति ने कहा।

'अच्छा, बहुत अच्छा' राजा ने बडी खुशी से कहा। और कहा "राजा का धर्म है प्रजा की रक्षा करना। उनके सुख-दुख में भाग लेना। जो राजा अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता, उसे अपने को राजा कहलाने का हक नहीं। तुम और सेना अपनी संपूर्ण शक्ति लगाकर प्रजा की रक्षा करोगे. इसका मुझे पूर्ण विश्वास है।"

"एक शुभ समाचार महाराज, जो स्त्रीयाँ और बच्चे शरणार्थी बनकर आये हैं, उनके रहने की व्यवस्था राजकुमारी ने राजप्रासाद की पश्चिमी दिशा में की है। उन्होंने स्वयं ये सारे प्रबंध करवाये हैं। राजकुमारी की परिचारिकाओं ने मुझसे बताया है कि इस प्रबंध-कार्य में आधी रात गुज़र चुकी है।" सेनाधिपति ने बताया।

"ग़रीबों की सेवा करने की प्रवृत्ति प्रियवंदा में बचपन से ही मौजूद है। ठीक है, वहाँ चलकर देखते हैं कि प्रबंध कैसे किये गये हैं?" राजा ने कहा।

'जो आज्ञा' कहते हुए सेनाधिपति राजा के पीछे-पीछे चला। राजा और सेनाधिपति जब राजप्रासाद की दक्षिणी दिशा में पहुँचे तब उन्होंने देखा कि वहाँ स्त्रीयाँ, पुरुष,

राजकुमारी ने 'हाँ' कहते हुए सिर हिलाया और मंद मुस्कान के साथ कहा "पिताश्री, मैं जानती हूँ कि राजकुमारी के नाते मेरे भी कुछ कर्तव्य हैं । जो प्रजा आपको और मुझे इतना चाहती है, उस प्रजा के लिए मैं इतना भी नहीं कर सकती? आप यहाँ की स्थिति के बारे में बिलकुल निश्चिंत रहिये । पिताजी, यहाँ के लोगों को कोई कमी ना हो, इसकी जिम्मेदारी मुझपर छोड दीजिये । उन शरणार्थियों के बारे में आप सोचिये, जो दूसरी जगहों पर हैं ।" ये बातें बडे विनय से उसने कहा ।

राजा और सेनाधिपति वहाँ से निकलकर जब राजप्रासाद के प्रधान भवन के पास पहुँच रहे थे, तब चार सैनिक उनके सामने आये । उनको देखकर लग रहा था कि वे किसी बात पर बहुत ही घबराये हुए हैं ।

सेनाधिपति ने उन्हें देखकर पूछा "क्यों, क्या हुआ? क्यों इतने घबराये हुए हो?"

"प्रभू, कल हमारे जो सैनिक दक्षिणी प्रांत में गये थे, उनका कोई अता-पता नहीं है ।" सैनिकों ने कहा। क्रोधित हो सेनाधिपति ने पूछा "उनका क्या हुआ?"

"वे कहाँ हैं, यह बताने के लिए वहाँ कोई है ही नहीं । आज सबेरे हमारे सैनिक जब वहाँ पहुँचे तब उन्होंने देखा कि उस पूरे प्रांत में कोई भी नहीं है । स्तब्धता छायी हुई है । अलावा इसके कुछ और गाँव भी बरबाद हो चुके हैं ।" घबराये हुए सैनिकों ने कहा ।

बच्चे क़तारों में बैठे हुए थे । उनके सामने पत्ते बिछे हुए थे । थोडी ही देर में राजकुमारी की परिचारिकाएँ क़तारों में बैठे हुए उन सबको, बरतनों में लाये गये भोजन-पदार्थ परोसने लगीं । सबको भोजन करते हुए देखकर राजा बहुत खुश हुआ और बोला "प्रियंवदा, तुम्हारा उदार स्वभाव प्रशंसनीय है । जो पीडित हैं, उनकी सेवा करने से ही मानव-जन्म सार्थक होता है । इस सत्य को जानकर तुम जो सेवा कर रही हो, उसकी जितनी भी तारीफ़ करूँ, कम है । तुम को देखते हुए मुझे गर्व हो रहा है । ये ग़रीब लोग सदा तेरा यह उदार गुण याद रखेंगे । ये लोग जब तक यहाँ रहेंगे उनकी देख-भाल का पूरा भार तुम्हें सौंप रहा हूँ ।"

सेनाधिपति ने पूछा "आज सबेरे जो सैनिक गये, वे लौट चुके हैं या नहीं"?

"तीन सैनिक यहाँ आये और पूरा विवरण देकर लौट चुके हैं। उनके साथ हमारा दलाधिपति वीरसिंह भी गया हुआ है" सैनिकों ने बताया।

सेनाधिपति ने आज्ञा दी कि वीरसिंह जैसे ही आयेगा, आकर उससे मिले।

"जो आज्ञा" कहकर सैनिक वहाँ से चले गये।

"यहाँ मौजूद लोगों को अगर मालूम हो जाए कि और बहुत-से घर भी गिर गये हैं तो बहुत ही घबरा जाएँगे। हाहाकार मच जायेगा। इसलिए यह बात अपने ही तक सीमित रखेंगे। समुद्र के तट पर हमारा जो दलाधिपति गया है, उसके वापस आने पर हो सकता है, हमें अपनी सेना वहाँ भेजनी पडे। इसलिए सेना को मुस्तैद रखो ताकि ज़रूरत पडने पर तुरंत हम उन्हें वहाँ भेज सकें।" राजा ने कहा।

"ऐसा ही करेंगे प्रभु। दलाधिपति के आते ही मैं आकर आपसे मिलूँगा।" कहकर सेनाधिपति वहाँ से चला गया।

सैनिकों के साथ समुद्री तट पर गया हुआ दलाधिपति उस दिन शाम को घबराया हुआ लौटा और सेनाधिपति से मिला।

"क्या बात है? ऐसी फीकी सूरत क्या बना रखी है तुमने? क्या यह जानकर लौटे हो कि असल में वहाँ हुआ क्या है?" सेनाधिपति ने पूछा।

"सब कुछ विचित्र है प्रभू। इसमें कोई संदेह नहीं कि कल शाम को हमारे सैनिक

सूचना उन्हें देकर भी आया हूँ। आप अनुमति दें तो सबेरे ही एक बार मैं वहाँ हो आऊँगा और समाचार जानकर लौटूँगा" दलाधिपति ने कहा।

सेनाधिपति ने कहा "शाबाश, ऐसा ही करो"। फिर वह वहाँ से राजभवन गया और राजा को पूरा समाचार सुनाया। वहाँ से वह शरणार्थियों के शिबिरों में गया। मालूम हुआ कि वहाँ जितने भी लोग थे, उनको खाने-पीने की या आराम करने में कोई दिक्कत नहीं हुई। सेनाधिपति ने जब देखा कि सिर्फ सैनिक ही नहीं, बल्कि नगरवासी भी उनकी सेवा में तन, मन, धन से लगे हुए हैं तो उसे बडा आनंद हुआ।

दूसरे दिन तड़के ही दलाधिपति वीरसिंह सेनाधिपति के घर आया। उसे देखते ही उसने पूछा "इतने में हो आये? बोलो, वहाँ की कैसी स्थिति है।"

"प्रभु वहाँ की परिस्थिति बडी भयंकर है। मैं जब निकलकर आ रहा था, तो सैनिकों ने आकर बताया वह भूत फिर आया है।" दलाधिपति ने कहा।

"हाँ प्रभु, ठीक आधी रात के समय समुद्रगर्भ से पर्वताकार में एक भूत का ऊपर आना सैनिकों ने अपनी आँखों से देखा है। वह ज़मीन पर चल रहा है या हवा में उड रहा है, इसका उनको पता नहीं चला। लेकिन हाँ, जब वह इधर-उधर देखता हुआ, सिर हिलाता हुआ धीरे-धीरे चलने लगता है, तब उसके पैरों के नीचे घर, घर के अंदर

जो गये, वे समुद्री तट पर पहुँचे। क्योंकि उनके पैरों के निशान साफ़-साफ़ दिखायी पडे। परंतु मालूम यह नहीं हुआ कि उनके वहाँ पहुँचने के बाद क्या हुआ है? बताने के लिए नाम-मात्र के लिए भी वहाँ कोई नहीं है।" दलाधिपति ने बताया।

सेनाधिपति ने पूछा "अब क्या करने का तुम्हारा ख्याल है?" "समुद्री तट पर जितने भी सैनिक हैं, उनको एक ही जगह पर ना रखकर उन्हें तीन जथ्थों में विभाजित किया है। पहला जथ्था समुद्री तट पर रहेगा। दूसरा जथ्था उनसे थोडी दूरी पर और तीसरा जथ्था उनसे भी थोडी दूरी पर रहेगा। तीनों जथ्थों के बीच में समाचार बराबर पहुँचते रहें और वे बिलकुल सावधान रहें, इसकी
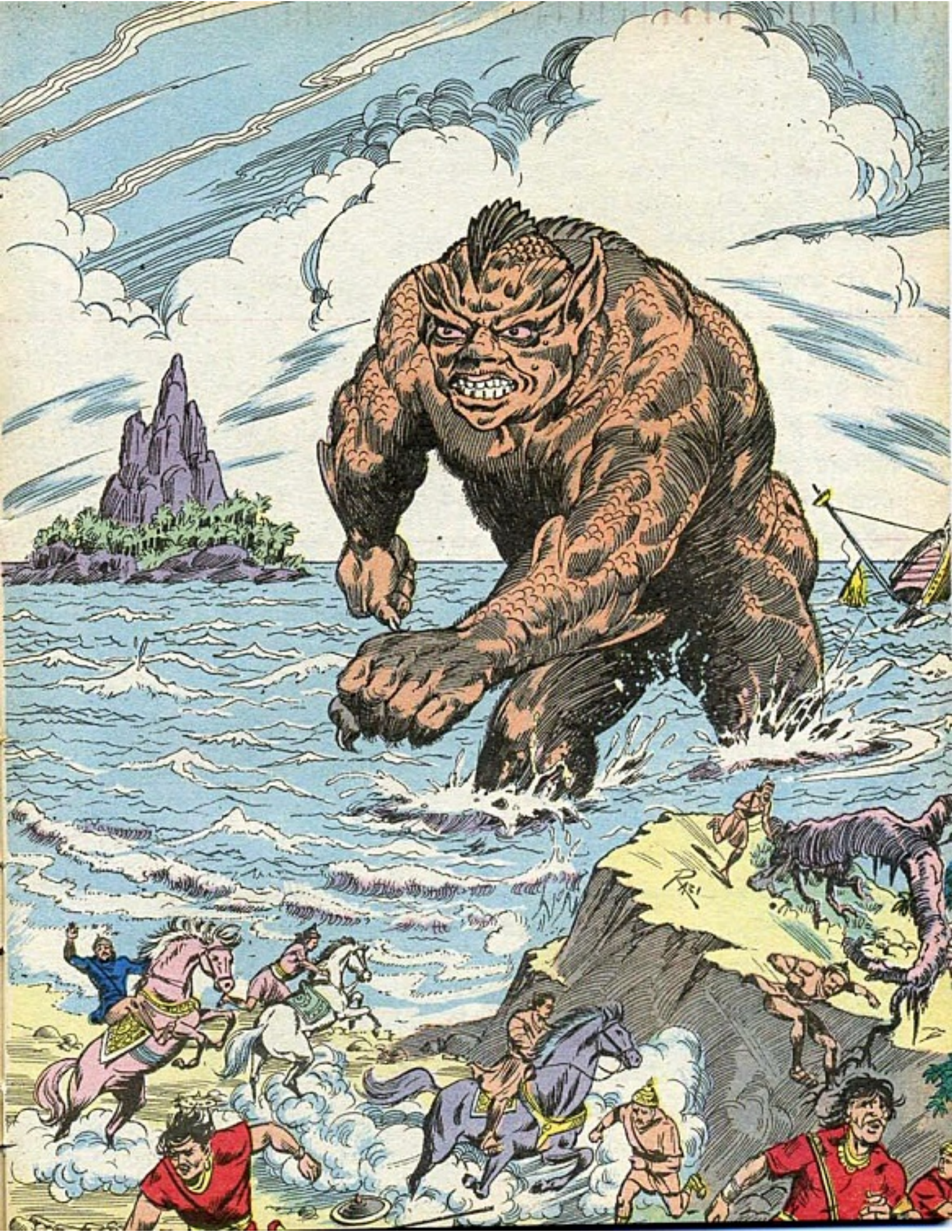
की जीव-राशियाँ, पेड आदि सब कुचल जाते हैं। वे भूमि केअंदर समा जाते हैं। उनका नामोनिशान ही मिट जाता है। वह भूत, बिना कोई आवाज़ किये अपने भयंकर सर को हिलाता हुआ उत्तरी दिशा की ओर चला गया है। समुद्री तट पर हमारे जो सैनिक थे, वे उसके पैरों के नीचे आकर कुचल गये हैं। उनसे कुछ दूरी पर खडे अन्य सैनिकों ने उस भूत के पिछले भाग को देखा है। उसके मुख को वे देख नहीं पाये। वे भयभीत हो गये और भागकर चले आये।" दलाधिपति घबराता हुआ बोला।

"वह कैसा भूत होगा? वह उत्तरी दिशा की ओर क्यों गया"? सेनाधिपति मन ही मन बड़बड़ा रहा था।

"हाँ सेनाधिपति, हमारे सैनिकों ने अगर उसका मुकाबला किया होता तो वे भी उसके पैरों के नीचे कुचले गये होते और भूमि के अंदर धंस जाते। भयभीत होकर उनके लौटने के कारण ही ये सारी बातें हमें मालूम हो पायी हैं" वीरसिंह ने कहा।

सेनाधिपति थोडी देर मौन सोचता रहा और बोला "तुम बता रहे हो कि वह उत्तरी दिशा की ओर गया हुआ है। वह समुद्र से आया है, इसलिए सुबह होने से पहले ही समुद्र में समा चुका होगा। उत्तरी दिशा की ओर हमारे कुछ सैनिकों को भेजो। वहाँ भी अवश्य ही कोई विपत्ति संभव हुई होगी। दक्षिणी समुद्र के तट पर अपने सैनिकों को यथावत् तैनात रखो। कल रात की ही तरह सैनिकों को तीन जथ्थों में विभाजित करके पहरा जारी रखो। उस विचित्र भूत के बारे में और बातें मालूम हों तो मुझे सूचित करना। मैं तुम्हारी कही बातें राजा को सुनाकार आऊँगा। प्रजा को इस खतरे से बचाने की जिम्मेदारी हम पर है।"

(शेष)
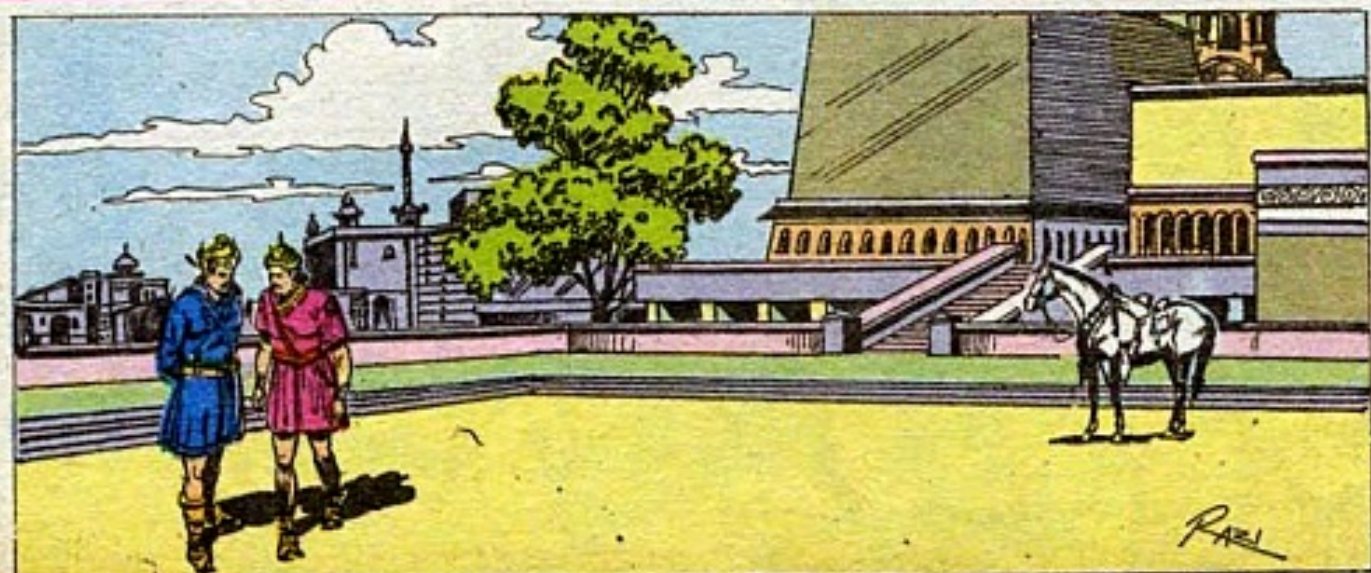
सच्चा दोस्त

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया, और पेड़ से लाश को उतारा । उस लाश को उसने कंधे पर डाल लिया और यथावत् मौन श्मशान की तरफ़ बढ़ा । तब लाश के अंदर का बेताल बोला "आधी रात के इस समय पर तुम्हें आराम से अपने अंतःपुर में सोना चाहिये था, लेकिन तुम ऐसा ना करके अपना प्रयत्न बडी ही निष्ठा के साथ कर रहे हो । तुम तो जानते ही हो कि तुम्हारे ये सारे प्रयत्न विफल हुए हैं । मैं तो कहूँगा कि तुम्हें यह हठ छोडना चाहिए । परंतु तुम तो अपना हठ छोडने का नाम ही नहीं ले रहे हो । मेरी समझ में यह नहीं आ रहा है कि मैं इसे तेरा विवेक कहूँ अथवा मूर्खता । बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं, जो अपनी वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट रहते हैं । इस स्थिति से अपनी रक्षा करने की शक्ति व सामर्थ्य उनमें मौजूद हैं । लेकिन इस सत्य से वे अवगत नहीं । यही कारण है

बेताल कथा

कि वे वर्तमान स्थिति से जूझने के लिए साहस करने का प्रयास नहीं करते और अपना अमूल्य समय निराशा से गुज़ारते रहते हैं। कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो इस स्थिति का मुक़ाबला करने का साहस तो करते हैं लेकिन वे निर्णय नहीं कर पाते कि अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए कौन ऐसा मित्र है, जो सच्चा सहायोग दे सकेगा। इस निर्णय के अभाव में वे ग़लत क़दम उठाते हैं। मुझे संदेह हो रहा है कि तुम भी उसी श्रेणी के व्यक्तियों में से हो। जो भी हो, इस विश्वास से मैं रामनाथ नामक एक व्यक्ति की कथा सुनाऊँगा, जिसे सुनाकर मैं तुम्हें सावधान भी कर रहा हूँ और साथ ही मार्गदर्शन भी" बेताल ने फिर यों कहना शुरू किया।

रामनाथ एक छोटा व्यापारी था। उसकी पत्नी सीता की तीव्र इच्छा थी कि वे शहर जाकर बस जाएँ और वहीं कोई व्यापार करें। रामनाथ् को अनेकों प्रकार की विद्यायें आती थीं। वह बहुत ही अच्छा गा सकता था। सुँदर चित्र-लेखन कर सकता था। उसकी ये कलाऐं उसके व्यापार से कोई संबंध नहीं रखती थीं, लेकिन इनका उसे बडा चाव था। मुँह मुलाहिज़ बहुत करता था। यही वजह है कि वह किसी को असंतृप्त करता ही नहीं था। गाँव में ज्यादा से ज्यादा लोगों से उसका अच्छा परिचय था। इसलिए उसकी दुकान में लोग जो चीजें खरीदने आते, उनमें से कुछ पैसे देते और कुछ बिना पैसे दिये ही चीज़े ले जाते। रामनाथ पैसों के लिए उनपर किसी प्रकार का दबाव नहीं डालता था। पर हाँ, इससे घर चलाने में उसे कोई बाधा तो नहीं होती थी, लेकिन उसके व्यापार में कोई वृद्धि भी नहीं होती थी। वह पहले से जैसा था, वैसा ही है। इससे उसकी कमाई में कोई बढ़ती नहीं हो पाती थी।

इसलिए उसकी पत्नी कहती कि शहर जाने में ही हमारी भलाई है। उसकी जिद के सामने रामनाथ को अपनी हार माननी ही पडी। उसने शहर जाने का निश्चय किया। गाँव में जो जायदाद भी, बेच डाला और बैल-गाडी में पत्नी समेत शहर निकला।

कुछ दूर जाने के बाद गाड़ी का धुरा टूट गया। गाड़ीवालेने गाड़ी की चाल में कुछ

खराबी पायी और पति-पत्नी को तुरंत गाडी से उतरने के लिए कहा । यों उसने दोनों को होनेवाले ख़तरे से बचाया ।

वे अब सोच में पड गये कि शहर कैसे पहुँचें? तब एक बैलगाडी सामने से आती नज़र आयी । गाडीवाले ने वह गाडी रोकी और उसने उससे सहायता की प्रार्थना की, जो उसमें बैठा हुआ था ।

उसे देखते ही रामनाथ को लगा कि इसे मैंने कहीं देखा है । दोनों जब आपस में एक दूसरे से परिचित हुए तब दोनों बडे प्यार से गले मिले । वह बडी-बडी मूँछवाला व्यक्ति कोई और नहीं था । वह सत्यानंद नामक उसके बचपन का जिगरी दोस्त था । अब उसका निवास-स्थल शहर में है ।

सत्यानंद ने रामनाथ की गाड़ी की मरम्मत में सहायता पहुँचायी और कहा "मैं अब एक ज़रुरी काम पर दूसरी जगह जा रहा हूँ । मैं अपने घर का पता और पूरा ब्यौरा देता हूँ । तुम लोगों को, जब तक मैं नहीं लौटूँगा, मेरे ही धर में रहना होगा । मेरे लौटते-लौटते दो महीने लग सकते हैं । अच्छी तरह सुन लो, तब तक तुम लोग किसी और जगह पर ठहर नहीं सकते । मैं जैसे ही लौटूँगा, तुम लोगों के रहने का पक्का बंदोबस्त करूँगा ।" कहता हुआ वह चला गया ।

सीता उसकी इन बातों से बहुत ही खुश हुई और उसने अपने पति से कहा "आपने तो अब तक बताया ही नहीं कि शहर में आपके इतने अच्छे दोस्त हैं ।"

"पंद्रहवें साल की उम्र तक सत्यानंद और धनशेखर मेरे जानी दोस्त थे । मेरा चित्रलेखन उन्हें बहुत ही अच्छा लगता था । मुझसे चित्रलेखन करवाते और मुझसे गवाते । गॉंव के खेतों के बारे में गाये जानेवाले मेरे लोक-गीत उन दोनों को बहुत पसंद आते थे । जब उनके मॉं-बाप गॉंव छोडकर शहर चले गये तब वे दोनों भी उनके साथ शहर चले गये । उसके बाद सत्यांनद से आज ही पहली बार मिल रहा हूँ" यों रामनाथ ने अपनी पत्नी सीता से कहा ।

सीता ने यह सुनकर बडी उत्सुकता से पूछा "तो क्या धनशेखर भी शहर में रहता है?"

रामनाथ ने कहा "तुमने क्या सुना नहीं,
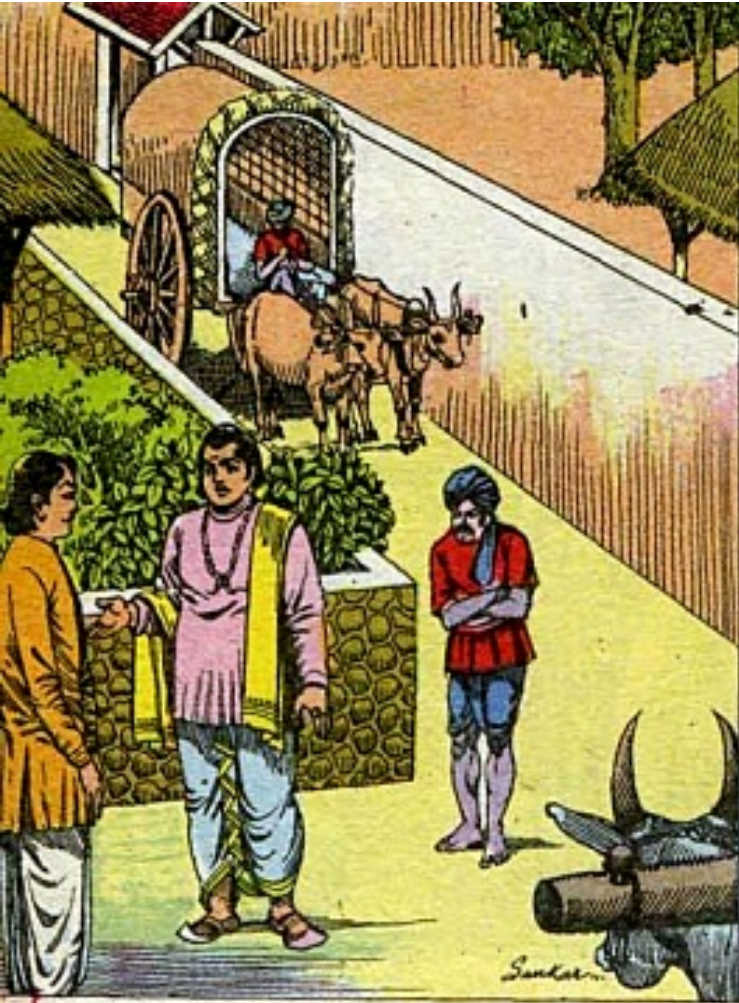
जब मैं धनशेखर के बारे में पूछ-ताछ कर रहा था तब सत्यानंद ने उसके बारे में कुछ बताने की दिलचस्पी ही नहीं दिखायी। उसके जवाबों में कडुवापन था। उसने मुझे यह कहकर सचेत भी कर दिया कि बडा होने के बाद धनशेखर काफ़ी बदल गया है। इसलिए अच्छा यही है कि तुम उसके बारे में और सवाल मत करो।"

फिर दो दिन की यात्रा के बाद शहर के सरहदों की एक तंग गली में उनकी बैलगाड़ी जाने लगी। इस तंग गली में दो गाड़ियाँ एकसाथ आमने-सामने से गुज़र नहीं सकतीं। एक गाडी रास्ते में रुकावट बनकर रुकी हुई थी। गाडी के अंदर बैठा हुआ एक आदमी नीचे खडे हुए आदमी से लगातार बातें करता जा रहा था। रामनाथ ने अपनी गाडीवाले को उसके पास भेजा। यह कहलवाने के लिए कि वह गाडी वहाँ से निकाली जाए तो उसकी गाडी वहाँ से आगे जा सकेगी। लेकिन गाड़ी वहाँ से निकालने से उसने साफ़ इनकार कर दिया।

गाड़ीवाला हताश वापस आया और पूरी बात रामनाथ को सुनायी। वह यह देखने गाड़ी के पास गया कि आख़िर यह धनशेखर है कौन? तो उसको देखकर रामनाथ पहचान गया कि यह धनशेखर दूसरा और कोई नहीं बल्कि उसका बाल्य-मित्र ही है। दोनों ने एक दूसरे को पहचाना और बडे आनंद से गले मिले। अपने बचपन की यादों को लेकर बहुत देर तक दोनों ने खूब बातें की। इन बातों के बीच में जब सत्यानंद का ज़िक्र आया तो धनशेखर ने कहा "वह भी इसी शहर में रहता है। उसने नाम तो काफ़ी कमाया, किन्तु मेरी तरह धन कमा नहीं सका। इसलिए वह मुझसे ईर्ष्या करता है।"

धनशेखर उस समय बहुत ही दूर कहीं किसी और ज़रूरी काम पर एक व्यक्ति से मिलने जा रहा था। अपने बाल्य-मित्र से मिलकर उसे इतनी खुशी हुई कि उसने अपनी यात्रा स्थगित करने का निर्णय किया। इसलिए गाड़ी के नीचे खडे होकर अब तक जिस आदमी से वह बात कर रहा था उससे कहा "नरसिंह, मैं बलभद्र से अपनी यात्रा स्थगित करने का समाचार बताकर वापस लौटूँगा। तुम इनको अपने साथ ले जाओ

और मेरा घर दिखावो ।"

थोडी दूर जाने के बाद रामनाथ ने पत्नी सीता से कहा "सत्यानंद ने बडे ही प्रेम से हमें अपने घर जाने को कहा है । इसलिए अच्छा यही होगा कि हम पहले उसके घर जाएँ ।"

सीता ने कहा "चुप हो जाइये । वे अपने काम पर जा रहे थे तो हमें रास्ते में अचानक मिल गये । औपचारिक रूप से जो बात कहनी थी, उन्होने कह दिया कि हम उसके घर जाएँ । वे हमारे लिए हमारे साथ थोडे ही अपने घर लौट आये,पर धनशेखर ने ऐसा नहीं किया । हमारे लिए अपनी यात्रा भी स्थगित कर दी और हमारे लिए लौट रहे हैं । इसलिए हमें धनशेखर के घर ही जाना है ।"

अपनी पत्नी को लेकर इंद्रभवन की तरह दिखनेवाले धनशेखर के महल के प्रांगण में उसने प्रवेश किया । दरवाज़े पर जो पहरेदार था, उसने उनसे सारा विवरण जान लिया और वहाँ रुकने के लिए कहकर अंदर चला गया । थोडी देर बाद धनशेखर की पत्नी सुलक्षणा बाहर आयी और कहा "महाशय, मैं नहीं जानती कि आप लाग कौन हैं? आप जानते ही हैं कि शहर में मेरे पति की बडी शोहरत है । उनका नाम कौन नहीं जानता? इसलिए बहुत-से लोग उन्हें अपना दोस्त कहते हुए आते-जाते रहते हैं । यहाँ आनेवालों में से कुछ लोग मौका देखकर चोरी करते हैं, कोई ना कोई चीज़ वे चुराके
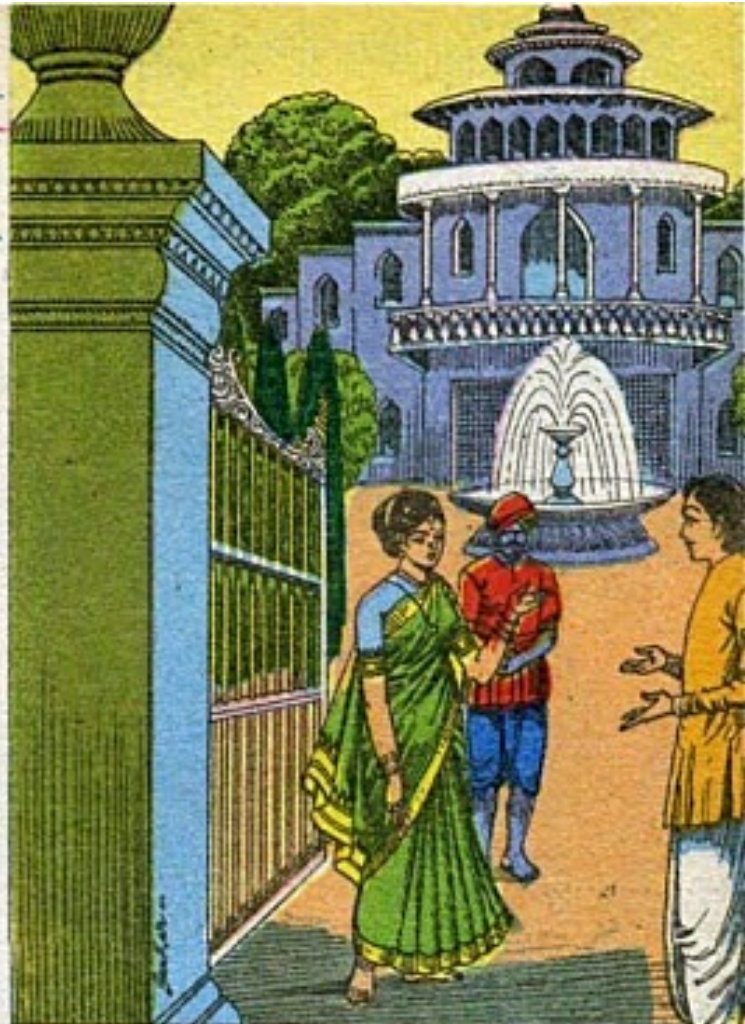
ले जाते हैं । इसलिए मैं चाहती हूँ कि आप उनके आते तक यहीं ठहरें । अगर आप सचमुच उनके दोस्त हों तो अपनी इस ग़लती पर आपसे क्षमा माँग लूँगी । मेरी बात का आप बुरा मत मानिये ।"

रामनाथ का सर अपमान से झुक गया । फिर भी अपने को काबू में रखकर उसने कहा "देवी, आपके पति ने हमें यहाँ जाने का बहुत ही आग्रह किया है । इसीलिए हम यहाँ आये हैं । अगर वे ऐसा ना कहते तो अपने बाल्य-मित्र सत्यानंद के घर चले गये होते ।"

सुलक्षणा को उसके इस कथन पर बडा आश्चर्य हुआ । उसने कहा "सत्यानंद के कोई भी दोस्त हमारे दोस्त नहीं हो सकते । आप शायद नहीं जानते कि उस घर पर

उडनेवाला कौवा भी हमारे घर पर नहीं उड सकता । मुझे लगता है कि आप सरासर झूठ बोल रहे हैं ।"

रामनाथ एक क्षण के लिए भी वहाँ नहीं रुका । अपनी पत्नी को लेकर वह बाहर चला आया । उसने अपनी पत्नी से बताया कि इस अपमान के जिम्मेदार तुम हो । उसपर सीता खीज उठी और कहा "हाँ, हाँ, आपके दोस्त आपकी नज़र में बहुत अच्छे हैं और मैं बहुत बुरी । एक धनवान के घर की यह नौबत है तो मालूम नहीं, उस ग़रीब के घर जाने से हमारा कितना और अनादर होगा । अब हमें किसी के घर जाना नहीं है । कहीं खाना खिलाकर पैसे लेनेवाली के घर जायेंगे और वहीं ठहरेंगे ।"

रामनाथ को पत्नी की बातें सही लगीं । वे वहाँ से एक बुढ़िया के घर गये, जो पैसे लेकर खाना खिलाती है । बूढ़ी ने पहले उनसे सारा विवरण जान लिया और कहा "तो आप सत्यानंद के गाँव के हैं । आप लोगों को यहाँ ठहरने नहीं दे सकती हुँ ।" सत्यानंद क्रोधित हो "तो क्या सत्यानंद के गाँव के लोगों को तुम जैसी बुढ़िया के घर में रहने के लिए भी जगह नहीं मिल सकती" बोला ।

बुढ़िया ने कहा "महाशय, मेरा यह मतलब नहीं है । सत्यांनद बहुत ही अच्छा आदमी है । जब मैं तकलीफों में थी, तब वह सज्जन मेरी मदद ना करता, तो मालूम नहीं, मुझपर क्या बीतती, मैं कहीं का ना रहती । वो साहब तो हमेशा कहा करते हैं कि जो भी लोग उनके गाँव से आयेंगे, उनको मेरे ही घर ठहरना होगा, तुम जैसी पैसे लेकर खाना खिलानेवाली के घर में नहीं । अगर आप मेरे घर में रहेंगे तो वे मुझे इस ग़लती के लिए माफ़ ही नहीं करेंगे ।" कहती हुई उसने एक आदमी को बूलाया और सत्यानंद के घर खबर भिजवायी ।

थोड़ी ही देर में सत्यानंद की पत्नी जलजा वहाँ आयी और बोली "भैय्या रामनाथ, आप और यहाँ? मेरे पति आपके बारे में बहुत-कुछ बताया करते हैं । वे हर दिन गाँव के खेतों के बारे में आपसे गाये जानेवाले लोक-गीतों को याद करते रहते हैं । बचपन में आपसे खींचे गये बहुत से चित्रलेखन भी उनके पास

सुरक्षित हैं । बडे अर्से से आपको देखने के लिए वे लालायित हैं । वे कहते थे कि आपके दायें गाल पर जो दाग़ है, वह उनकी मार का ही नतीजा है । है ना? इस घटना के स्मरण-मात्र से वे बहुत ही दुखी हो जाते हैं । आप दोनों को मेरे ही घर ठहरना होगा । अब और कहीं ठहरने का सवाल ही नहीं उठता ।"

रामनाथ और सीता के सामने सत्यानंद के घर जाने के अलावा अब कोई चारा नहीं रह गया । वहाँ पहुँचने के थोडी देर बाद नरसिंह के ज़रिये धनशेखर ने रामनाथ को खबर भेजी कि वे उसके घर आयें । अकेले रामनाथ उसके घर गया ।

धनशेखर जो हुआ, उसपर बहुत पछताया । बोला "रामनाथ, मुझमें और सत्यानंद में बडा बैर है । हम दोनों एक दूसरे के कट्टर दुश्मन हैं । इसलिए मैं स्वयं उसके घर नहीं आया । बलभद्र के घर में बहुत विलंब हो गया । मैंने तुम्हारे लिए बहुत ही आवश्यक काम स्थगित कर दिया । घर आने पर जो हुआ, सब मालूम हुआ । मुझे सचमुच इसका बडा दुख है । कुछ दिन बीत जाएँ तो तुम्हीं जान जाओगे कि इसमें मेरी कोई ग़लती नहीं है । शहर के हालात ही कुछ ऐसे हैं । कुछ भी हो, मेरी पत्नी को माफ़ कर दो । अपनी पत्नी समेत तुम यहीं आकर ठहर जाओ । धन कमाने के सारे मार्ग मैं तुम्हें सिखाऊँगा और मेरी ही तरह तुम्हें धनवान बनाऊँगा ।"

"मुझ पर तुम्हारा जो प्रेम है,उसके लिए हृदयपूर्वक धन्यवाद । परंतु मैं रहूँगा तो सत्यानंद के घर पर ही रहूँगा" रामनाथ ने दृढ़ता से कहा ।

धनशेखर ने बहुत गिड़गिड़ाया । उसने धमकी भी दी कि अगर तुम सत्यानंद के ही घर रहोगे तो तुम्हें मेरी दुश्मनी भी मोल लेनी पडेगी । इस धमकी से रामनाथ अपने निर्णय से टस मे मस ना हुआ । वह सत्यानंद के घर वापस लौटा ।

यह कहानी सुनाकर बेताल ने विक्रमार्क से कहा "राजन्, इससे तो यह साफ़-साफ़ साबित होता है कि धनशेखर ने जान-बूझकर रामनाथ का अपमान नहीं किया है । इतना धनी होते हुए भी रामनाथ से क्षमा-याचना

माँगना धनशेखर की उदात्तता नहीं तो और क्या है? धनशेखर जैसा चाहता, वैसे ही अगर रामनाथ उसके घर रहता तो उसकी सहायता से वह लखपति बनता । जिस लक्ष्य को लेकर वह शहर आया, उस लक्ष्य की पूर्ति होती । कौन अपना सच्चा मित्र है और कौन नहीं, यह सत्य जान ना पाने के कारण ही, जो सुअवसर उसके हाथ आया, खो बैठा । यह उसकी मूर्खता नहीं तो और क्या है? मेरे इन संदेहों का निवारण जानते हुए भी अगर तुमने नहीं किया तो तुम्हारा सर फट जायेगा" ।

विक्रमार्क ने कहा "रामनाथ को पहले मालूम ही नहीं था कि उसके दोनों दोस्त शहर के प्रमुख व्यक्ति हैं । मतलब इसका यह हुआ कि वह अपनी शक्ति और योग्यता पर निर्भर रहकर गाँव छोडकर शहर निकला । बीच रास्तेमें दोनों दोस्तों से भेंट हुई और यह अनहोनी बात है । अब रही यह बात कि धनशेखर और सत्यानंद में कौन सच्चा दोस्त है । हाँ, यह तो सही है कि धनशेखर रामनाथ को अपना दोस्त मानता है, उसकी दोस्ती की इज्ज़त करता है । परंतु उसकी दोस्ती का स्मरण उससे मिलने पर ही उसे होता है । उसने अपने बाल्य-मित्र के बारे में अपनी पत्नी से कभी भी कुछ भी नहीं कहा । पर सत्यानंद की ऐसी बात नहीं । रामनाथ के बारे में सत्यानंद ने अपनी पत्नी जलजा को पूरा विवरण दिया । अलावा इसके, उस खाना खिलानेवाली बुढ़िया को भी अपने गाँव के बारे में वह बहुत कुछ बता चुका है । इससे मालूम होता है कि उसको अपने गाँव से कितना लगाव है । यह सब कुछ जानने के बाद भी रामनाथ ने धनशेखर का विश्वास नहीं किया तो इसमें आश्चर्य की कौनसी बात है? इन कारणों से रामनाथ समझ पाया कि इन दोनों मित्रों में से कौन उसका सच्चा दोस्त है । धनशेखर की बात ना मानकर, सत्यानंद के घर में ही रहने के उसके निर्णय में कदापि मूर्खता नहीं है ।"

राजा का मौन भंग जैसे ही हुआ, बेताल लाश को लेकर उड़ गया और पेड़ पर जा बैठा ।

आधार-श्रीमती वसुंधरा की रचना

चन्दामामा परिशिष्ट-५६

भारत के पशु-पक्षी :

लकड़बग्घा

बिल्ली म्याव म्याव करती है । कुत्ता भौंकता है । तो फिर बिल्ली व कुत्ते के मिश्रित रूप का यह जानवर क्या करता है, जानते हो? हँसता है । यह विचित्र जानवर जब आवाज़ देना चाहता है तब ठठाकर हँसता है । इस तरह हँसते हुए, वह हड्डियों के ढेर के चारों तरफ घूमते हुए एक प्रकार का नृत्य करता है ।

लकड़बग्घा के पाँव, कुत्ते के पाँवों की तरह और बदन बिल्ली की तरह का होता है । लेकिन इसमें ना तो बिल्ली की मृदुता या सुँदरता है या ना ही कुत्ते की शरीर की फुर्ती व ताकत । खडे कानों को लिये हुए इसका सर बडा होता है । पीछे के पाँव मोटे और नाटे होने की वजह से इसके शरीर का पिछला भाग नीचे झुका हुआ होता है । यह १५० सें भी लंबा ९० सें मी ऊँचा होता है । खाकी व हल्के बैंगनी रंग से मिले हुए इसके शरीर पर काली लकीरें होती हैं । इसके पैरों पर भी काली लकीरें होती हैं । यह जानवर भोजन के लिए कभी भी शिकार नहीं करता । दूसरे जानवरों को मारकर जो अंश अन्य जानवर छोड देते हैं, उन्हें खाकर यह अपना पेट भरता है । यह बहुत ही डरपोक स्वभाव का है । यह जानवर इन्सानों से दूर ही रहता है । लेकिन ख़बरें हैं कि तभी जन्मे शिशुओं को यह जानवर उठाकर ले जाता है ।

आज का भारत : साहित्य-दर्पण में

असम के जंगलों के चट्टानों के नीचे भूगर्भ में पेट्रोलियम पाया गया । इससे वहाँ के पहाड़ों पर 'दिग्बाय' शहर बसा । भारत देश के विविध प्रांतों से यहाँ कुली आया करते थे । धर्म उनके अलग-अलग होते हुए भी वे सब मिल-जुलकर रहते थे ।

इस प्रकार वहाँ आकर बसनेवालों में से चांद अभीर एक था । एक बार उसकी पत्नी बीमार पड़ी । सही इलाज व आहार के अभाव के कारण वह मर गयी । माँ की ममता से वंचित उसकी संतान में 'पन्नू' एक

बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य का 'प्रतिपाद'

लड़की है, जो बहुत ही सुंदर थी । उसी शहर में दिनबेश्वर एक अफ़सर था । वह धर्म से हिन्दू था, लेकिन जहानारा नामक एक युवती से वह शादी करना चाहता था । इसलिए उसने मुस्लिम मज़हब को अपनाया और अपना नाम रखा, गियासुद्दीन । मुसलमान बनने के बाद उसने जहानारा से शादी की । परंतु, शादी होने के थोड़े अर्से के बाद दुर्भाग्यवश वह बीमार पड़ गयी । उसे इस बात का बडा ही अफ़सोस हो रहा था कि उसे अपने पति को छोडकर जाना पड रहा है, जो इन्साफ के लिए लड़ता है और जो बहुत ही भलमानस है । जब से वह बीमार पडी है तब से चांद अभीर की बेटी पन्नू उसी के साथ रहकर उसकी मदद करती थी, उसकी सेवा-शुश्रूषा करती थी । उसने पन्नू से मिन्नत की कि मेरे मरने के बाद मेरे पति से शादी करो । फिर वह मर गयी ।

पन्नू के पिता ने शर्त रखी कि जब तक गियासुद्दीन अपना मज़हब छोडकर हिन्दू नहीं बनता तब तक उसकी शादी उसकी बेटी से नहीं हो सकती । उसी समय चटर्जी नामक एक युवक पन्नू से प्रेम करने लगा । लेकिन संकोच के मारे वह अपने प्रेम को प्रकट नहीं कर पाया । यह राज़ उसने अपने ही तक छिपा रखा ।

इस बीच शहर की परिस्थितियों में बडी ही तेज़ी से परिवर्तन होने लगे । वैयक्तिक सुख-दुख, कष्ट-नष्ट भुला दिये गये और इन परिवर्तनों पर लोगों का अधिकाधिक ध्यान आकृष्ट होने लगा । मज़दूरों का एक होकर लड़ना ब्रिटिश आयल कंपनी के मालिकों को अच्छा नहीं लगा । आधुनिक यंत्रों को उपयोग में लाकर बहुत-से मज़दूरों को उन्होंने काम से निकाल दिया ।

मज़दूरों में अशांति फैली । शोरगुल मचा । मज़दूरों की सम्मिलित लडाई से मालिक घबरा गये । उनमें डर पैदा हो गया । उन्होंने देखा कि इस लडाई को जीतने का एक ही उपाय है और वह है इनको एक दूसरे से अलग करना । मज़दूरों में हिन्दू और मुसलमानों के भेद-भाव को भर दिया और उन्हें एक दूसरे के ख़िलाफ उकसाया । एक आदमी को रकम दी और उसके ज़रिये हिन्दुओं के मंदिर में गाय का माँस रखवा दिया । पर वह आदमी पकडा गया और साज़िश का पता चल गया ।

यह सब हुआ, द्वितीय विश्व-युद्ध के आरंभ के पहले । उस ज़माने में ब्रिटिश, भारतीयों से जान-बूझकर दूर रहा करते थे । अंग्रेज़ और भारतीयों के बीच किसी प्रकार के मानवीय संबंध नहीं रहे । मज़दूरों की हड़ताल की वजह से कंपनी दूर प्रदेशों से नये मज़दूरों को गाड़ियों मे ले आयी । मज़दूरों ने उन्हें वहाँ आने से रोका । एक अंग्रेज अफ़सर ने उनपर अंधाधुंध गोलियाँ बरसायीं । गोलियाँ चलाने से मरे हुए लोगों में से थे-पन्नू का पिता चाँद अभीर, चटर्जी, हाल ही में विवाहित गायक बरुवा और बोधन नामक वह आदमी, जिसने गोमाँस मंदिर में रखा था । इसको अपनी भूल पर बडा पछतावा हुआ और अब वह मज़दूरों से कंधे से कंधा मिलाकर अपने हकों के लिए लडाई लड रहा था ।

अंग्रेज़ों में भी अवश्य ही कुछ ऐसे सद्भावों से भरित व्यक्ति हैं, जिन्होंने न्याय की रक्षा के लिए सुदृढ़ता से अन्याय के खिलाफ लडाई की । ऐसे लड़नेवालों में से एक हैं श्रीमती प्लेमियास । वह पीडित प्रजा का सहारा बनकर अन्याय के विरुद्ध लड़ने सन्नद्ध हो गयी ।

"लडाई का यह अंत नहीं है, भविष्य में और भी बडे-बडे तूफान आनेवाले हैं" यह चेतावनी देते हुए उपन्यास समाप्त होता है ।

असम के प्रमुख रचयिता, ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त बीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य से रचित सुप्रसिद्ध उपन्यास है "प्रतिपाद", जिसकी यह कथावस्तु है । कहा जता है कि यह उपन्यास १९३९ के करीब रचा गया है, जिसकी पृष्ठभूमि थी-दस हज़ार दिगुबाय के मज़दूरों की सम्मिलित ठोस हड़ताल । पात्र व घटनाओं का चित्रण बडे ही वास्तविक रूप में हुआ है । 'नेशनल बुक ट्रस्ट आफ इंडिया' ने इस उपन्यास को विविध भाषाओं में अनुवाद करके प्रकाशित किया है ।

क्या तुम जानते हो?

१. मैसूर के सुल्तान टिप्पू की राजधानी का नाम क्या है?
२. गरुडपक्षी, सर्प किस देश के झंडे में देखे जाते हैं?
३. इंग्लैंड में तंबाकू को किसने प्रवेश किया?
४. १९३९ सितंबर तीसरी तारीख को कौन-सी मुख्य घटना घटी?
५. रवींद्रनाथ टागौर की किस रचना से उन्हें नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ?
६. 'डैनमेट' का आविष्कार किसने किया?
७. 'होल्कर्ल' ने कहाँ से शासन किया?
८. 'यूकलिप्टस' पेड़ किस देश में अधिकाधिक हैं?
९. 'सेलोन' कब 'श्रीलंका' बना?
१०. 'शबरमति साधु' कहकर किसको बुलाते थे?
११. परिशिया की राज्य-स्थापना किसने की?
१२. सती सहगमन और बाल्य-विवाहों के विरुद्ध लडनेवाला भाररतीय समाज-सुधारक कौन था?
१३. अंतरिक्ष में गये हुए पहले व्यक्ति का नाम क्या है?
१४. सूर्यमंडल में सबसे बृहत ग्रह कौन-सा है?
१५. अमृतसर के स्वर्णमंदिर का निर्माण सिख धर्म के एक गुरु के निवास-स्थल पर हुआ है । वे गुरु कौन हैं?
१६. एक फुट लंबी जीभ के होते हुए भी कौन-सा वह जंतु है, जिसके कंठ से स्वर ही नहीं निकलता?
१७. नोबेल शांति-पुरस्कार प्राप्त करनेवालों में से सब से छोटी उम्र के कौन हैं?
१८. आर्य समाज के संस्थापक कौन हैं?
१९. कोलार के स्वर्ण-खान किस राष्ट्र में हैं?
२०. 'लोकसभा' को रद्द करने का अधिकार 'स्पीकर' को है? अगर नहीं तो किसको है?

उत्तर

१. श्रीरंगपट्टण ।
२. मेक्सिको ।
३. सरवाल्टर राली (१५५२-१६१८) नामक अंग्रेज़ ।
४. इंग्लैंड ने जर्मनी पर युद्ध घोषित किया ।
५. गीतांजलि ।
६. अलफ्रेड नोबेल (१८६७) ।
७. वर्तामान मध्यप्रदेश का इंदौर ।
८. आस्ट्रेलिया ।
९. मई १९७२ ।
१०. महात्मा गाँधी ।
११. सैरस का सम्राट । (ई. पू-५००-४००)
१२. राजा राममोहन राय ।
१३. सोवियत अंतरिक्ष यात्री यूरी गगारिन ।
१४. गुरु ग्रह (१४२,८०० कि.मी व्याप्त) ।
१५. गुरुराम दास ।
१६. जिराफी ।
१७. मार्टिन लूथर किंग जूनियर १९६४ में पैंतीसवें वर्ष में प्राप्त हुआ ।
१८. स्वामी दयानंद सरस्वती ।
१९. कर्नाटक ।
२०. नहीं । राष्ट्रपति को है ।

बैरागी की सलाह

गृहस्थी चंद्रनाथ साधु-संतों को बहुत चाहता था। उसका विश्वास था कि साधु-संतों के आशीर्वाद और कृपा के बिना जीवन में शांति-सुख प्राप्त नहीं हो सकते। धर्म और न्याय के मार्ग पर चलने के लिए उनका मार्गदर्शन नितांत आवश्यक है। एक दिन वह एक बैरागी को अपने घर ले आया और उसकी पाद-पूजा की। बैरागी उसकी भक्ति, श्रद्धा और सादगी से बहुत ही प्रभावित हुआ। उसने चंद्रनाथ से कहा "मैं तुमसे बहुत ही प्रसन्न हूँ। अगर तुम मुझसे कुछ चाहते हो तो पूछो, तुम्हें क्या चाहिये?"

चंद्रनाथ ने बडे ही विनय से कहा "स्वामी, मैं जीवन से बहुत ही संतृप्त हूँ। मेरी अपनी कोई इच्छा नहीं है। आप जैसे महात्माओं के आशीर्वाद के कारण मेरे पास संपत्ति और सुख हैं। इनकी कोई कमी नहीं है। लेकिन मेरी पत्नी चंद्रमुखी सदा असंतोष से पीडित रहती है। मुझे मालूम नहीं कि उसके असंतोष का कारण क्या है? आप अगर बता सकें कि यह असंतोष उससे कैसे दूर हो सकेगा तो बडी कृपा होगी?"

बैरागी ने सर हिलाया और चंद्रमुखी को बुला लाने को कहा। चंद्रमुखी से उसने अनेकों प्रश्न किये और उसने उन सबका उत्तर दिया। बैरागी ने तब पूछा "इतना सब कुछ होते हुए भी तुममें यह असंतोष क्यों?"

"यही तो मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है कि इतना सब कुछ होने के बावजूद मुझमें क्यों इस अससंतोष ने घर कर रखा है? हमारे महल के बगल में ही एक खपरैल का घर है। उसमें वीरभद्र नामक एक आदमी रह रहा है। बडी मुश्किल से उसका परिवार चलता है। पति-पत्नी दोनों मेहनत करते हैं, फिर भी उनकी कमाई अपना

जे. रामलक्ष्मी

परिवार चलाने के लिए पर्याप्त नहीं होती । ऐसा होते हुए भी वीरभद्र की पत्नी कांता सदा प्रसन्न रहती है, मानों उसे किसी बात की कमी ही नहीं है ।''

बैरागी एक क्षण सोचता रहा और फिर बोला ''जो मनुष्य केवल अपने लिये ही जीवित रहता है, उसमें आत्म-संतोष नहीं होता । कांता प्रतिफल की आशा किये बिना परिश्रम करती है, इसीलिए वह सदा संतृप्त और आनंदित दिखती है । तुम्हें मेरी सलाह है कि प्रतिफल की आशा किये बिना तुम भी अपने काम निर्विघ्न करती जाओ ।''

उस समय वहाँ लक्ष्मी आयी । वह ग़रीब थी । दो-तीन घरों में काम-काज करके अपना पेट भरने इस गाँव में आयी । आज तक वीरभद्र के घर के अलावा किसी और के घर में उसे काम नहीं मिला । एक बार उसने चंद्रमुखी से काम के लिए पूछा तो उसने यह कहकर टाल दिया कि कुछ और दिनों के बाद मिलो । उसी काम के लिए लक्ष्मी आज चंद्रमुखी के यहाँ आयी । चंद्रमुखी ने बडी नीरसता से उससे कह दिया ''जब हमारे ही घर में काम करनेवाले नौकरों को पूरा काम नहीं दे पा रही हूँ तो तुम्हें रखकर क्या करूँगी ।''

लक्ष्मी को लौटता देखकर बैरागी ने कहा । ''अच्छा, तो तुम वीरभद्र के यहाँ काम कर रही हो? वे लोग तो स्वयं धन के अभाव में पिस रहे हैं, और तुम्हें नौकरानी रख लिया । यह तो बडे अचरज की बात है ।''

लक्ष्मी ने बैरागी को बताया ''उन लोगों ने मुझे अपने यहाँ इसलिए रख लिया कि इससे मेरी मदद भी हो जायेगी और साथ ही उनके काम में भी मैं भरसक हाथ बाँट सकूँगी । मैं तो नहीं जानती कि उनकी क्या तकलीफ़ें हैं, पर वे जो खाते हैं, वही मुझे भी खिलाते हैं । मैंने तो उनसे साफ कह दिया, मुझे मेरे काम के लिए एक अशर्फी काफ़ी है, लेकिन वे मुझे दो अशर्फियाँ देते हैं, क्योंकि मुझे कहीं दूसरी जगह पर काम नहीं मिला है । खाने का खर्च नहीं हैं, क्योंकि उन्हीं के घर में खाना मिल जाता है । सोती भी हूँ, उन्हीं के चबूतरे पर । काम तीन-चार घरों में मिल जाए तो कहीं अपने रहने का

बंदोबस्त भी कर लूँगी । यही उम्मीद लेकर यहाँ भी आयी हूँ ।"

चंद्रमुखी ने कहा "मैं जानती ही नहीं थी कि तुझे ऐसी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है । अच्छा, एक काम करो । तुम्हें दोनों वक़्त खाना दूँगी और महीने में दस अशर्फियाँ भी । लेकिन हाँ, सिर्फ हमारे ही घर में काम करना होगा ।"

"ऐसा ही करूँगी । लेकिन यह ना कहना कि मैं कांता के घर में काम ना करूँ ।" लक्ष्मी ने साफ़ बोल दिया ।

बैरागी चंद्रमुखी के इस व्यवहार से संतृप्त हुआ और वहाँ से चला गया ।

चंद्रमुखी के घर में इतना काम तो नहीं था कि वह लक्ष्मी से करवाये । लेकिन उसे चुप भी तो बैठने नहीं देना चाहिये ना । इसलिए उससे खाट, अलमारियाँ आदि कपडे से साफ़ करवाती थी । फूलों से इसके पहले भगवान की पूजा करती थी, अब लक्ष्मी से माला बंधवाकर पूजा करने लगी ।

ऐसे छोटे-मोटे कामों के बाद लक्ष्मी को आराम करती देखती तो चंद्रमुखी के मन में असंतोष की भावना जाग उठती । वह ऐसे काम अब लक्ष्मी को सौंपती, जिनसे कोई उपयोग नहीं होता । उनको करना या ना करना दोनों बराबर थे । इन कामों को सौंपकर उसे तसल्ली होती कि हाँ, मैंने लक्ष्मी को बेकार बैठने नहीं दिया । आखिर उसे कोई काम तो सौंपा है ना?

लक्ष्मी इन सब कामों को आसानी से कर देती किन्तु काम करते समय या बाद, जो खुशी उसे कांता के घर में होती थी, वह खुशी चंद्रमुखी के घर में नहीं होती थी । चंद्रमुखी के घर में एक नौकरानी बनकर रहती थी और कांता के घर में घर का एक अभिन्न अंग बनकर । चंद्रमुखी यह सब कुछ देखती रहती और उसका असंतोष बढ़ता जाता ।

कुछ समय बाद बैरागी वापस लौटा और उसे सारी बातें मालूम हुईं । लक्ष्मी के इस रुख को जानने के बाद वह स्वयं कांता के घर गया । वहाँ की परिस्थितियों का पूर्ण परिचय प्राप्त किया । वहाँ से लौटकर चंद्रमुखी के घर की परिस्थितियों का मनन किया । दोनों घरों की परिस्थितियों का

तुलनात्मक अध्ययन किया ।

स्वामी की गंभीर मुद्रा को देखकर चंद्रमुखी ने पूछा "स्वामी जी, हम दोनों में कोई फरक दिखायी पडा?"

बैरागी ने कहा "कांता के घरमें काम अधिक है, लेकिन वह लक्ष्मी से तभी काम करवाती हैं, जब ज़रूरत पड़ती है । ज़रूरत से ज्यादा काम वे उससे करवाते ही नहीं । जिस लोटे से वे लोग पानी पीते हैं, उसे तो वे खुद साफ़ करते हैं । पानी पीने के बाद वे नौकरानी को धोने के लिए नहीं देते । जब कोई काम खुद करते हों तो उस समय उनका व्यवहार जैसे होता है, वैसा ही व्यवहार वे काम कराते समय नौकरानी से भी करते हैं । वे उसे भी अपने ही में से एक मानते हैं । उनसे हर महीने वेतन लेती है, इसिलए दूसरों से वह नौकरानी कहलायी जाती है । पर उसे नौकरानी ना कहकर घर का एक सदस्य कहा जाए तो उचित होगा । इसी वजह से उस घर में काम करते या रहते हुए लक्ष्मी खुश रहती हैं ।"

बैरागी की बातों से चंद्रमुखी नाराज़ हुई और बोली "मैने भी तो उसके साथ अच्छा ही सलूक किया है ।"

"अब भी बात तुम्हारी समझ में नहीं आयी । वे उससे काम करवाते है, क्योंकि काम है । पर तुम तो उससे काम इसलिए कराती हो कि घर में एक नौकरानी है । क्या दोनों में कोई फरक तुम्हें नहीं दिखायी दे रहा है?" बैरागी डाँट के सुर में बोला ।

चंद्रमुखी ने अब अपनी ग़लती महसूस की । वह कुछ कहना ही चाहती थी कि इतने में बैरागी ने कहा "तुम्हारे असंतोष का कारण ईर्ष्या है । कांता को अपने से ज्यादा संतृप्त पाकर तुमसे सहा नहीं जा रहा है । इस ईर्ष्या को छोडो और कांता से दोस्ती का हाथ बढाओ । अपना बडप्पन जताने के लिए नहीं, बल्कि भलमानस होकर दूसरों की सहायता करो । उससे होनेवाला संतोष व संतृप्ति असीम होगी ।"

चंद्रमुखी ने बैरागी की बातों की सच्चाई जानी, और उसकी सलाहों के मुताबिक चलने लगी । उसका हृदय अब संतोष और संतृप्ति से भरा हुआ था ।

भारतीय विद्यार्थी को अमेरिका का प्रोत्साहन

वाषिंगटन के समीप के फेरफाक्स कौंटी में ग्यारह साल का लड़का अखिल रस्तोगी छठवें दर्जे में शिक्षा प्राप्त कर रहा है । उस लड़के की माँ दीपा एक ब्यांक में नौकरी कर रही है । उसके दायें हाथ की नसों को चोट पहुँची है । इस कारण जब वह जग लेकर कप में दूध उँडेलती है, तब दूध गिर जाता है । माँ की इस हालत पर अखिल को बडा दुख होता है । उसने खूब सोच-विचारकर प्लास्टिक की स्क्रू की एक नली का आविष्कार किया । इस नली की सहायता से दूध बिना नीचे गिरे सीधे कप में गिरने की सुविधा है । अपने बेटे के इस आविष्कार से उसकी माँ बहुत ही प्रसन्न हुई । उसके परिवार के दोस्तों ने उस साधन के पेटेंट के लिए दरख्वास्तें देने की सलाहें दीं । अमेरीका की एक संस्था ने पेटेंट को मंजूर किया । इस प्रकार अपनी छोटी ही उम्र में अखिल अमरीका में पेटेंट प्राप्त कर पाया ।

अंग्रेज़ी में शब्द-वर्ग

अंग्रेज़ी में शब्द-वर्ग खेल को 'स्केबल' कहते हैं । अंग्रेज़ी सीखनेवाले विद्यार्थी इस खेल को बडी ही दिलचस्पी से खेलते हैं । विद्यार्थियों की शब्द-संपदा इससे बढ़ती है । आलफ्रेड बटस नामक एक वास्तुविद ने इस खेल को सुचारू रूप दिया । वह अपने ९३ वें साल में पिछले अप्रैल में मरा । उसने इस खेल को १९३० में रूप दिया । उसने बोर्ड के व्यापारियों को इसे बेचना चाहा । लेकिन किसी ने इसे नहीं खरीदा । बीस सालों के बाद एक छोटी-सी व्यापार-संस्था ने इसे प्रकाशित किया । बच्चों ने जब इस खेल में बहुत ही दिलचस्पी दिखायीं, तब जिस संस्था ने पहले इसे खरीदने से इनकार किया, उसी संस्था ने बडे पैमाने पर इसे प्रकाशित किया । उसी बुनियादी सूत्र के आधार पर 'मेग्नटिक सेट' भी इसके साथ जोडा गया, जिससे सफ़र करते समय भी यह खेल खेला जा सकता है । इसके बाद संसार की अनेकों भाषाओं में यह प्रकाशित हुआ । अनुमान है कि करोंडों की संख्या में इसकी बिक्री हुई है ।

विदूषक बुह्लूल

खलीफ़ा हारून अलरशीद के दरबार में बुह्लूल नामक एक विदूषक रहा करता था। वह सिर्फ विदूषक ही नहीं, बल्कि ज्ञानी भी था।

एक दिन खलीफ़ा ने अपने विदूषक से पूछा "बुह्लूल, क्या तुम बता सकते हो कि हमारे बगदाद नगर में कितने मूर्ख होंगे?"

विदूषक ने जवाब दिया, "हाँ, मैं जानता हूँ कि हमारे बगदाद शहर में कितने मूर्ख हैं।"

"अच्छा, अगर तुम जानते हो तो उन सब मूर्खों की एक सूची बनावो। उसे तैयार करने में एक भी ग़लती नहीं होनी चाहिये। तुम समझ गये ना?" खलीफ़ा ने बताया।

खलीफ़ा की इस बात पर विदूषक ठठाकर हँस पडा और बोला "उससे आसान तो बगदाद नगर के ज्ञानियों की सूची तैयार करनी है। मैं मूर्खों की सूची नहीं, ज्ञानियों की सूची तैयार करूँगा। उस सूची में जो नहीं हैं, समझ लीजिये, वे सब मूर्ख हैं"।

बुह्लूल एक दिन खलीफ़ा की गैरहाज़िरी में उसकी गद्दी पर बैठ गया। उसके इस दुत्साहस पर दरबार के राजकर्मचारियों ने उसे लाठियों से खूब पीटा।

खलीफ़ा जब वहाँ पहुँचा, तब दर्द के मारे विदूषक ज़ोर-जोर से रोने लगा। खलीफ़ा ने विदूषक से रोने की वजह जानी और उसे वे उसे सांत्वना देने लगे।

"सरकार को ग़लतफ़हमी हो रही है। मैं अपनी चोटों की वजह से रो नहीं रहा हूँ। मैं थोडी देर के लिए गद्दी पर क्या बैठा, बुरी तरह से पीटा गया हूँ, पर आप तो ज़माने से गद्दी पर बैठे हुए हैं और बैठे रहेंगे। मुसे इस बात की फिक्र हो रही है कि मालूम नहीं, इस ज़ुर्म के लिए आपको कितनी मारें खानी पडेंगीं" विदूषक ने कहा।

अरेबिया की कहानी

बुह्लूल को शादी से सख्त नफ़रत थी। यह जानने पर खलीफ़ा बहुत नाराज़ हुआ। उसने एक दिन अपनी गुलाम औरतों में से एक खूबसूरत लडकी को चुना और उसकी शादी जबरदस्ती बुहलूल से कर दी। उस सुहाग रात को जब वह लडकी विदूषक के पास आकर बैठ गयी तो वह एकदम उठ बैठा और 'बाप रे, बचाओ, बचाओ' कहकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा। फिर बादशाह के महल की ओर भागा।

खलीफ़ा ने उसे बुलाया और उसपर नाराज़ होते हुए कहा "शैतान, तेरी शादी एक खूबसूरत लडकी से करवायी और तुम उसे छोडकर यहाँ भागे-भागे चिल्लाते आये हो? यह भी कोई तरीका हैं"? इसपर विदूषक ने कहा" सरकार माफ़ करें। इसमें कोई शक नहीं कि मेरी बीबी खूबसूरत है। लेकिन वह जैसे ही मेरे पास आकर बैठ गयी बैसे ही उसके कलेजे से मुझे कुछ आवाज़ें सुनयी पडने लगीं। वे आवाज़े यों हैं "मुझे अच्छे कपडे चाहिये। मुझे कीमती गहने चाहिये।" इन आवाज़ों को सुनकर मैं बहुत ही ड़र गया। यही वजह है कि मैं आपके पास भागा-भागा आया हूँ।"

विदूषक की इन बातों का मतलब खलीफ़ा से पैसे ऐंठने का नहीं था। क्योंकि एक बार खलीफा ने विदूषक को हजार सोने की अशर्फियाँ भेंट में दी तो उन्हें लेने से उसने इनकार कर दिया। फिर दूसरी बार भी खलीफ़ा की भेंट को लेने से उसने साफ़-साफ़ इनकार कर दिया।

खलीफ़ा ने उससे पूछा "खुशी-खुशी में
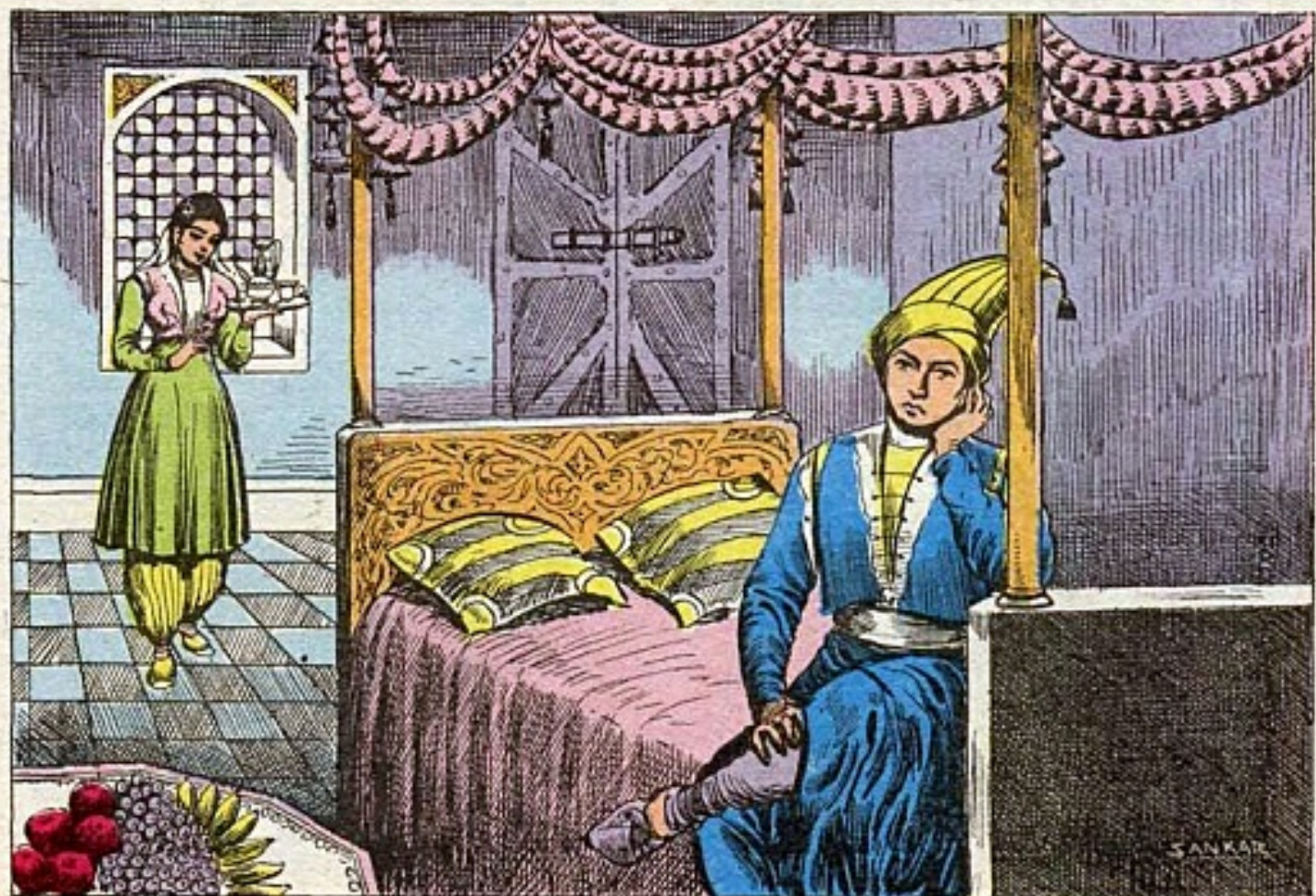
तुम्हें यह भेंटें दे रहा हूँ और तुम उन्हें लेने से क्यों इनकार कर रहे हो?"

उस सवाल के जवाब में विदूषक ने अपने पैर का तलवा उठाकर खलीफ़ा के मुँह के सामने रख दिया।

उसके इस दुस्साहस को देखकर खलीफ़ा के बंदे विदूषक को मारने उसपर टूट पडे।

खलीफ़ा ने उनको रोका और पूछा "क्यों इस तरह बेइज्ज़ती से पेश आ रहे हो"?

विदूषक ने कहा "सरकार, मेरी बातों पर तवज्जुह दें। अगर सरकार के सामने अपने हाथ फैलाकर आपकी भेंटें स्वीकार करता तो तो आपको यह तलवा दिखाने का हक मुझसे छिन जाता।"

एक बार खलीफ़ा जंग जीतकर वापस आ रहा था। उस वक़्त खलीफा के साथ विदूषक बुह्लूल भी था। एक ठहराव पर आधी रात को खलीफा को विदूषक ने पानी लाकर दिया क्योंकि खलीफा उस समय बहुत प्यासा था।

विदूषक ने कहा "इस पानी को पीने के पहले सरकार को मेहरबरनी करके मेरे इस सवाल का जवाब देना होगा। इस पानी के ना मिलने की हालत में, इस पानी के लिए सरकार कितनी कीमती भेटें देते?"

"आधी सल्तनत देता" कहता हुआ खलीफ़ा ने पानी पी लिया।

"सरकार मेरे एक और शक को दूर करें। जो पानी आपने पिया है, उसकी वजह से आपको मूतना तो पडेगा ही। समझिये, आपका यह पानी आपके पेट के अंदर ही रह गया और आप मूत नहीं पाये तो उसे बाहर लाने के लिए आप क्या देंगे?" विदूषक ने सवाल किया।

"ज़रूरत पडे तो आधी सल्तनत दे दूँगा" खलीफ़ा ने कहा।

"तो इसका मतलब यह हुआ कि पानी और मूतने की कीमत बराबर है। जब इनकी इतनी कीमत हो तो फिर इस सल्तनत के लिए लडाई करने की क्या ज़रूरत है?" बुह्लूल बोला।

खलीफ़ा ने शरम से अपना सर झुका लिया।

राम को सीता से इतनी कटुता और कठोरता के साथ बातें करते देखकर सब सुननेवालों में भय और कंपन पैदा हो गया। सीता ने अपने जीवन-काल में कभी भी किसी से ऐसे कटु वचन नहीं सुने। सिर झुकायी खडी सीता ने अपना सर और झुका लिया। अपमान के भार से मानों वह दबी जा रही थी। इतने लोगों के सामने उस का जो घोर अपमान हुआ, उससे उसकी आँखों में आँसू भर आये।

अपने आँसुओं को पोंछती हुई धीमे स्वर में उसने कहा "वीर, ऐसी बातें क्यों कर रहे हो? जिसको सच्चाई का ज्ञान नहीं, उसके मुँह से निकलनेवाली ये बातें मेरे सुनने योग्य नहीं हैं। जैसा तुम समझते हो, मेरा शील नष्ट नहीं हुआ है। मैं प्रतिव्रता और निष्कलंक हूँ। अगर तुम चाहते हो तो मेरे पातिव्रत्य की परीक्षा करो। स्त्रीयों में बुरी स्त्रीयाँ हो सकती हैं, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि सब स्त्रीयाँ बुरी हैं, कलंकित हैं। मेरे स्वभाव से अगर तुम भली-भाँति परिचित हो तो मुझपर तुम्हें जो संदेह है, त्याग दो। रावण जब मुझे उठाकर ले गया तब अगर उसके शरीर ने मेरा स्पर्श किया तो वह मेरी असहायता ही के कारण संभव हुआ है। यह त्रुटि मेरी नहीं, बल्कि भगवान की है। मेरा मन मेरे ही अधीन रहा है और वह सदा तुम्हारा ही स्मरण करता रहा है और करता रहेगा। इतनी लंबी अवधि तक हम साथ-साथ रहे, तुम्हारे ही संग जीवन-

व्यापन किया, फिर भी तुमने मेरे स्वभाव को नहीं जाना और अब किसी भी प्रकार से वह जाना भी नहीं जा सकता और उसे जानने से तुम अस्वीकार कर रहे हो । अगर तुम मेरा त्याग करना ही चाहते हो, तो मुझे ढूँढने के लिए हनुमान को भेजने की आवश्यकता क्या थी? अगर तुम हनुमान से कहलवाकर भेजते कि मैंने तेरा त्याग कर दिया तो मै उसी के सम्मुख कभी की मृत्यु की शरण में गयी होती । तुम्हें यह युद्ध करने की आवश्यकता ही ना पडती । तुम्हारे मित्रों को इतनी दूर आने का कष्ट भी ना होता ।"

उपरांत उसने लक्ष्मण से कहा "लक्ष्मण, मेरे दुख के दूर होने का एक ही उपाय है और वह है चिता । तुम उसका प्रबंध करो । उसमें कूदकर मैं अपने प्राण त्याग दूँगी । यों अपमानित होकर, ऐसे कटु वचन सुनने के बाद मैं जीवित भी रहना नहीं चाहती । इतने लोगों के बीच जब मेरे पति ने मुझे त्याग दिया है, तब अग्नि–प्रवेश के अलावा कोई दूसरा मार्ग मुझे दिखाई नहीं पड़ रहा है ।"

सीता की इन बातों ने लक्ष्मण के हृदय को झकझोर दिया । उसने बडी दीनता से राम की ओर देखा । राम के मुख से स्पष्ट मालूम हो रहा था कि सीता अगर अग्निप्रवेश करना चाहती है तो करे, उसे कोई आपत्ति नहीं । इसलिए लक्ष्मण ने सीता की इच्छा की पूर्ति करना अपना धर्म समझकर चिता को सजाने का आवश्यक प्रबंध किया । चिता खूब जल रही है । नत-मस्तक हो सीता ने राम की परिक्रमा की और चिता के निकट आयी । उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की और कहा "राम के सिवा मेरे हृदय में किसी और पुरुष के लिए स्थान नहीं है, यह अगर तथ्य हो तो अग्निदेव ही मेरी रक्षा करें । सूर्य, वायु, दिशाएँ, चंद्र, दिन, रात, उभय संध्याएँ,भूमि तथा और देवताएँ मुझे प्रतिव्रता मानते हों तो यह अग्निदेव मेरी रक्षा करें" कहती हुई सीता ने चिता की परिक्रमा की और सुलगती हुई आग में प्रवेश किया ।

यह देखते हुए उपस्थित सब लोगों ने हाहाकार मचाया । राम भी आँसू बहाता हुआ मौन रह गया ।

देखते-देखते चिता छिन्नाभिन्न हो गयी । उसमें से अग्निदेव मनुष्य-रूप में प्रकटित

होकर सीता को बाहर ले आया ।

सीता पहले की ही तरह गहनों से सुसज्जित थी । लाल साडी पहनी हुई थी । केशालंकरण जैसे का तैसा था । उसपर किसी प्रकार की आँच ना आयी ।

अग्निदेव ने राम से कहा "राम, स्वीकार करो अपनी धर्मपत्नी सीता को । यह हर पाप से मुक्त स्त्री है । उसने तुम्हारे अलावा किसी पुरुष के बारे में सोचा तक नहीं । हाँ, रावण ने इसे अपने अंतःपुर में रखा । भयंकर राक्षस स्त्रीयों के पहरे में यह रही । इसमें कितनी ही आशाएँ जगाने का उसने प्रयत्न किया । अनेकों प्रकार से इसे डराया, धमकाया, पर यह विचलित नहीं हुई । रावण के बारे में इसने कुछ सोचा ही नहीं । अब सीता को स्वीकार करो और सुख से जीवन बिताओ ।"

अग्निदेव की इन बातों से राम बहुत ही संतुष्ट हुआ । ऐसी प्रतिव्रता का अपमान करने के अपराध में वह बहुत ही चिंतित हुआ और आँखों से आँसू बहाने लगा । उसने अग्निदेव से कहा "मैं भली-भाँति जानता हूँ कि सीता पाप-रहित है, निष्कलंक है । आप जानते ही हैं कि इतनी लंबी अवधि तक सीता जब रावण के पास रही है और मैंने उसकी परीक्षा लिये बिना ही उसे स्वीकार कर लिया है तो लोग मुझपर कैसे-कैसे लांछन लगायेंगे । वे कहेंगे कि दशरथ का पुत्र राम अधर्मी है, कर्तव्य-च्युत है । इस कलंक की असत्यता को बताने, उसे निराधार जताने और सीता को पतिव्रता प्रमाणित करने के लिए ही सीता का अग्निप्रवेश मैं मौन देखता

रह गया । अब तीनो लोकों को अवगत हो गया है कि वह प्रतिव्रता है, निष्कलंक है, धर्मपरायणा है । मैं इस बात से अनभिज्ञ नहीं हूँ कि उसके हृदय में मेरे लिए कितना स्थान है? मैं अवश्य ही आपकी आज्ञा का पालन करूँगा ।"
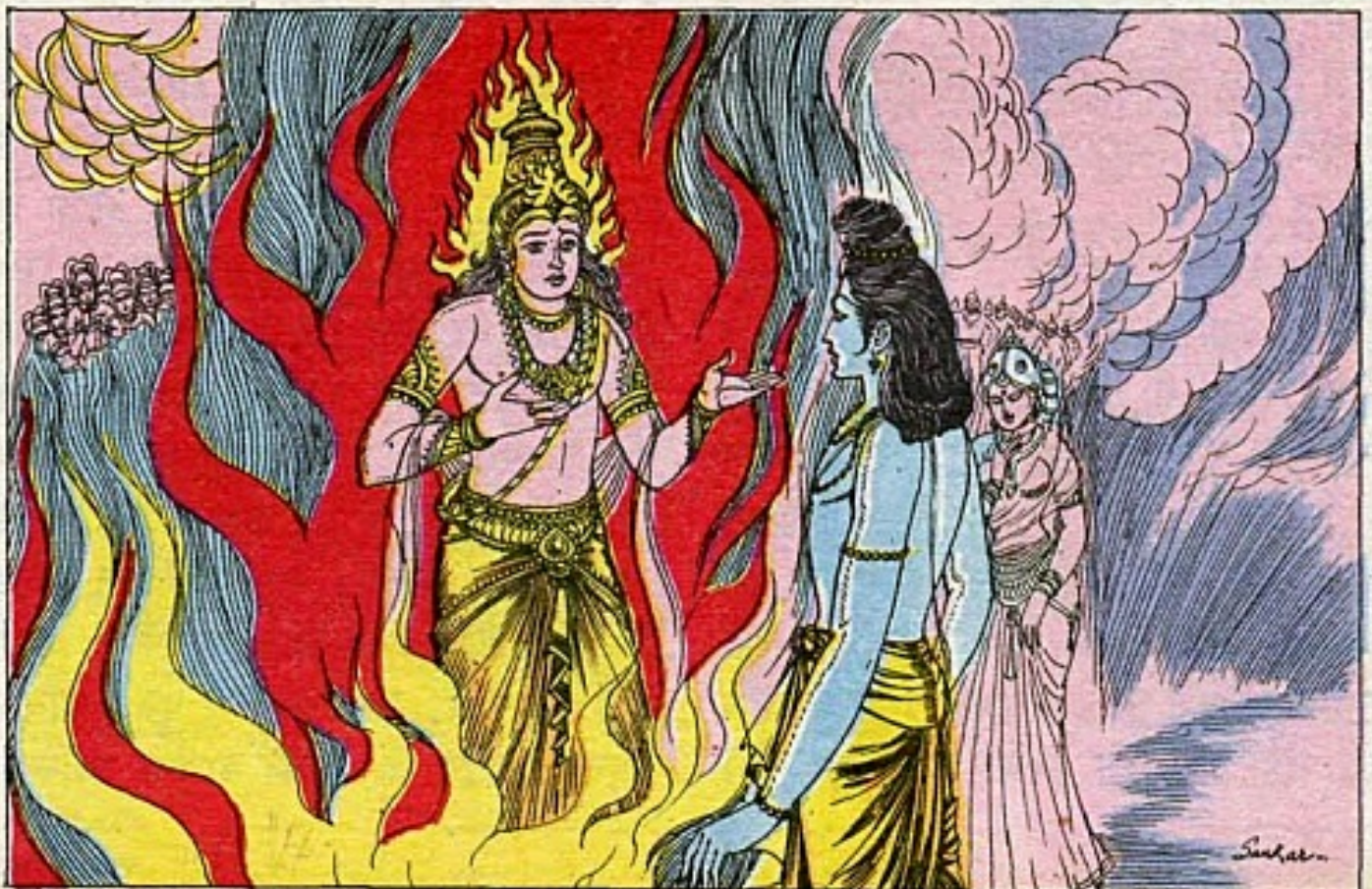
उस समय दशरथ स्वर्ग से दिव्य विमान में वहाँ पधारे । राम-लक्ष्मण और सीता ने उन्हें विनय से नमस्कार किया । दशरथ ने अपने प्रिय पुत्र राम को अपने आलिंगन में लेते हुए यों कहा "पुत्र राम, तुमसे विछुडने के कारण स्वर्ग के ये सुख, देवताओं का सम्मान आदि मुझे आनंद पहुँचा नहीं सके । शत्रुओं का वध करके तुमने वनवास का यह व्रत पूरा किया है । तुम जैसे कर्तव्यपरायण पुत्र को पाकर कौन पिता गर्वित नहीं होगा? तुम्हें मालूम नहीं कि मैं कितना आनंदित हो रहा हूँ । तुम्हें वन भेजने के लिए कैकेयी ने जब मुझसे कहा तो तुम नहीं जानते कि मेरे हृदय को कितनी बड़ी ठेस पहुँची है । उसके स्मरण मात्र से अब भी मेरा मन कांप उठता है । अब समझ गया हूँ कि रावण को तुम्हारे हाथों वध कराने के लिए ही देवताओं ने तुम्हारे राज्याभिषेक में विघ्न डाले हैं । वनवास समाप्त करके तुम्हारे लौटने पर कौसल्या बहुत प्रसन्न होगी । लौटकर अपना राज्याभिषेक करो । राज्य-भार संभालते हुए अपने भाइयों के साथ सुखी रहो ।"

हाथ जोडकर राम ने दशरथ से कहा "आपने मुझे वनवास भेजने के अपराध में कैकेयी और भरत को त्यागने की बात कही है । अब उन्हें क्षमा कीजिये ।"

दशरथ ने राम की प्रार्थना स्वीकार की । लक्ष्मण को गले लगाया और राम की की गयी उसकी सेवाओं की प्रशंसा की । सीता से उसने कहा "तुम्हें त्यागने की बात पर राम से कोधित ना होना ।" यों कहकर सब को प्रणाम करता हुआ दशरथ आनंद से स्वर्ग की ओर चल पडा । बाद इंद्र राम के सम्मुख आये और कहा कि इस अवसर कर मुझसे कोई बरदान माँगो । राम ने इंद्र से मांगा कि "मेरे लिए जिन-जिन बानरों ने अपने प्राण त्यागे हैं, उन सब को पुनः जीवित करना ।" इंद्र ने उसकी प्रार्थना स्वीकार

की । इसके दूसरे ही क्षण युद्ध-भूमि में जो वानर मरे पडे थे, जिनके सर और धड अलग-अलग बिखरकर पडे हुए थे, हाथ कहीं तो पाँव किसी और जगह पर जिन वानरों के थे, वे सब जीवित उठ बैठे । लग रहा था, इन्हें कुछ हुआ ही नहीं । मानों ये अभी-अभी नींद से जागकर उठे हों । उन्हें जीवित देखकर वहाँ उपस्थित लोगों के आश्चर्य की सीमा नहीं रही ।

रात जैसी ही बीती, विभीषण ने रामके स्नान का पूरा प्रबंध किया । शुद्ध जल, सुँगंधि-लेपन, नूतन वस्त्र और कुछ स्त्रीयों को अपने साथ ले आया ।

राम ने विभीषण से कहा "विभीषण, सुग्रीव आदि वानरों को स्नान के लिए बुलावो । मुझे शीघ्र ही अयोध्या जाना है । चौदह सालों के समाप्त होने के दूसरे ही दिन अगर मैं दिखायी नहीं पडूँगा तो भरत ने प्रतिज्ञा की है कि वह अग्निप्रवेश करेगा । इसलए स्नान आदि अब मेरे लिए मुख्य नहीं हैं ।"

विभीषण ने कहा "राम, तुम्हें एक ही दिन के अंदर अयोध्या पहुँचाऊँगा । रावण ने ज़वरदस्ती कुबेर से पुष्पक विमान छीना है । उसमें तुम एक ही दिन में अयोध्या पहुँच सकते हो । मेरी तुमसे प्रार्थना है कि मैं तुम्हारी, सीता और लक्ष्मण की जो सेवा और सत्कार करना चाहता हूँ, उन्हें स्वीकार करो ।" "विभीषण, युद्ध में दिया गया तुम्हारा सहयोग ही मेरे लिए सबसे बडा सत्कार है । मुझसे मिलने चित्रकूट आये भरत को देखने के लिए मैं बहुत ही आतुर हूँ । अपनी माताएँ कौसल्या, सुमित्रा, कैकेयी, गरुदेव वसिष्ठ और स्नेह-पात्र नगरवासियों को देखने की मेरी लालसा है । उनसे शीघ्र ही मिलने की मेरी तीव्र इच्छा है । अतिशीघ्र ही तुम पुष्पक विमान मंगावो । अब मैं यहाँ एक पल भी ठहर नहीं सकता । शीघ्र ही यहाँ से जाने की अनुमति दो ।" राम ने कहा ।

विभीषण तुरंत पुष्पक विमान ले आया । पुष्पों से अलंकृत उस विमान को दिखाकर विभीषण ने बडे विनय से पूछा "और क्या आज्ञा है ।"

"वानरों ने मेरी जो सहायता की, वह

सकते हैं । इसकी मैं आपको अनुमति देता हूँ । सुग्रीव, एक बंधु और एक सखा बनकर तुमसे जितना हो पाता था, मेरे लिए तुमने किया । अपनी सेना सहित किष्किंधा जाकर सुख से रहो । विभीषण, मैंने तुम्हें जो लंका-राज्य दिया, इसपर एक अच्छे राजा की तरह शासन करो । ऐसा करने पर देवता भी तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते । आप लोग अनुमति दे तो मैं अब अयोध्या जाऊँगा ।"

सुग्रीव तथा अन्य वानर, विभीषण आदिने राम से निवेदन किया "हम भी अयोध्या आने की इच्छा रखते हैं । हमें भी वहाँ ले जाओ । हम उन नगरवासियों को किसी तरह की बाधा नहीं पहुँचायेंगे । उनसे हमारा सद्व्यवहार होगा । तुम्हारा राज्याभिषेक देखकर, माता कौसल्या को प्रणाम करके अपने यहाँ लौट चलेंगे ।"

"तुम सब लोग मेरे साथ आना चाहते हो, तो इससे बढ़कर और क्या प्रसन्नता हो सकती है? सुग्रीव, अपने वानरों को लेकर इस पुष्पक विमान में आओ । विभीषण, तुम भी अपने मंत्रियों सहित अंदर आओ ।" राम ने कहा ।

सुग्रीव अपने वानरों और विभीषण अपने मंत्रियों के साथ जैसे ही पुष्पक विमान में आये, पुष्पक विमान आकाश में उड़ा ।

वह विमान वायुवेग से आकाश में उड़ने लगा । राम ने उस समय सीता को त्रिकूट पर्वत पर स्थित लंका-नगरी दिखायी । रक्त

वर्णानातीत है । उन्हें आभूषण, वस्त्र आदि देकर उनका सम्मान करो । जो लंकानगर देवताओं के भी अधीन नहीं हो सका, उसे वानरों ने हमारे अधीन किया है । उनके अथक परिश्रम का फल उन्हें मिलना चाहिये । तुम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता जताओगे तो वे बहुत ही प्रसन्न होगे" राम ने विभीषण से कहा ।

विभीषण ने वानरों की सेवा-सुश्रूषा और सम्मान करके राम की इच्छा की पूर्ति की । बाद राम सीता को लेकर पुष्पक विमान पर चढ़ा । लक्ष्मण पीछे-पीछे आया । राम ने वानर, सुग्रीव और, विभीषण से कहा "आप लोगों के कारण मुझे कार्य-सिद्धि प्राप्त हुई है । अब आप लोग जहाँ जाना चाहें, जा
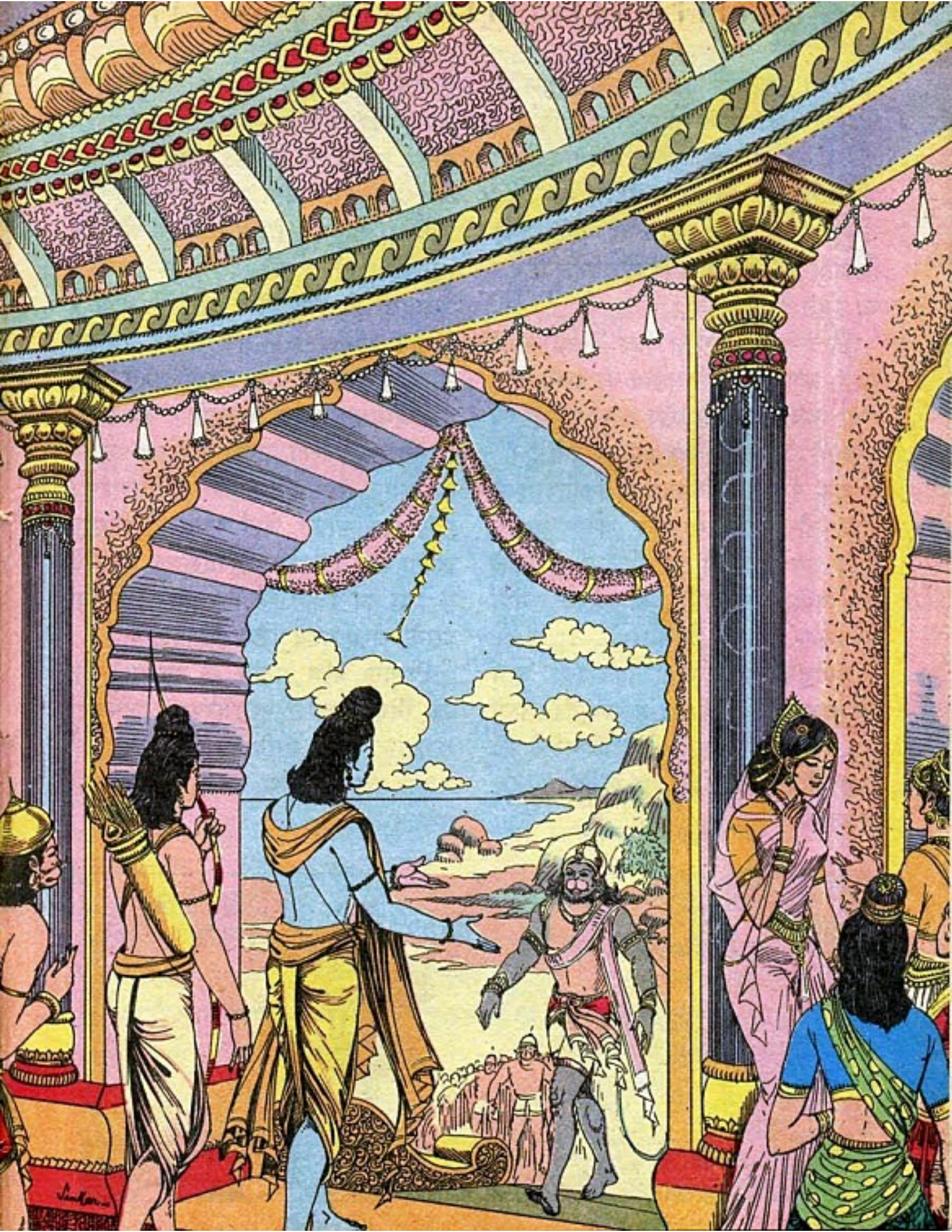
से सिक्त युद्ध-भूमि दिखायी । वह स्थल भी दिखाया, जहाँ उसने रावण का वध किया । कुँभकर्ण का मरा हुआ प्रदेश और समुद्र-सेतु भी दिखाया । विभीषण पहली बार जब उसके पास आया था, वह प्रदेश भी दिखाया । किष्किंधा नगर और वालि के वध का स्थल भी दिखाया ।

सीता ने तब राम से कहा "अयोध्या में प्रवेश करने के पहले सुग्रीव की पत्नी तारा तथा अन्य स्त्रीयों को और वानर प्रमुखों की पत्नियों को अपने साथ ले जाना चाहती हूँ ।"

राम ने पुष्पक विमान को किष्किंधा में रोका और सुग्रीव से कहा "सीता चाहती है कि तुम लोगों की सब पत्नियों को अपने साथ अयोध्या ले जाऊँ । आप अपनी स्त्रीयों को इसका समाचार दीजिये ।"

सुग्रीव ने तारा के पास आकर कहा "राम की आज्ञा है कि तुम्हें और अन्य वानर स्त्रीयों को अयोध्या ले आऊँ । यह सीतादेवी की इच्छा भी है । शीघ्र ही यात्रा के लिए सन्नद्ध हो जाइये ।"

तारा ने सिर से पैर तक आभूषणों से अपने को अलंकृत किया और अन्य वानर स्त्रीयों से कहा "चलो, हम सब अयोध्या जाकर वहाँ की विशेषताएँ देख आयेंगे।" वानर स्त्रीयों ने अपने को खूब सजाया । सीता को देखने के लिए वे उतावली हो रही थीं । तारा के साथ वे विमान में आयीं । अब फिरसे विमान आकाश में उड़ने लगा । राम ने तब सीता को ऋष्यमूक पर्वत दिखाया । वह स्थल भी दिखाया, जहाँ पहली बार वह सुग्रीव से मिला । सुँदर पंपा सरोवर भी दिखाया । सीता को खोकर जहाँ बहुत ही विलाप करता रहा, वह स्थल भी दिखाया । कबंध के वध का प्रदेश भी दिखाया । अलावा इसके, अन्य मुख्य प्रदेश भी दिखाये ।

विमान अत्रि महर्षि के आश्रम, गुह का निवास-स्थल श्रृँगबेरपुर, चित्रकूट, भरद्वाज़ाश्रम आदि प्रदेशों पर से उड़ता हुआ अयोध्या नगरी के पास आने लगा ।
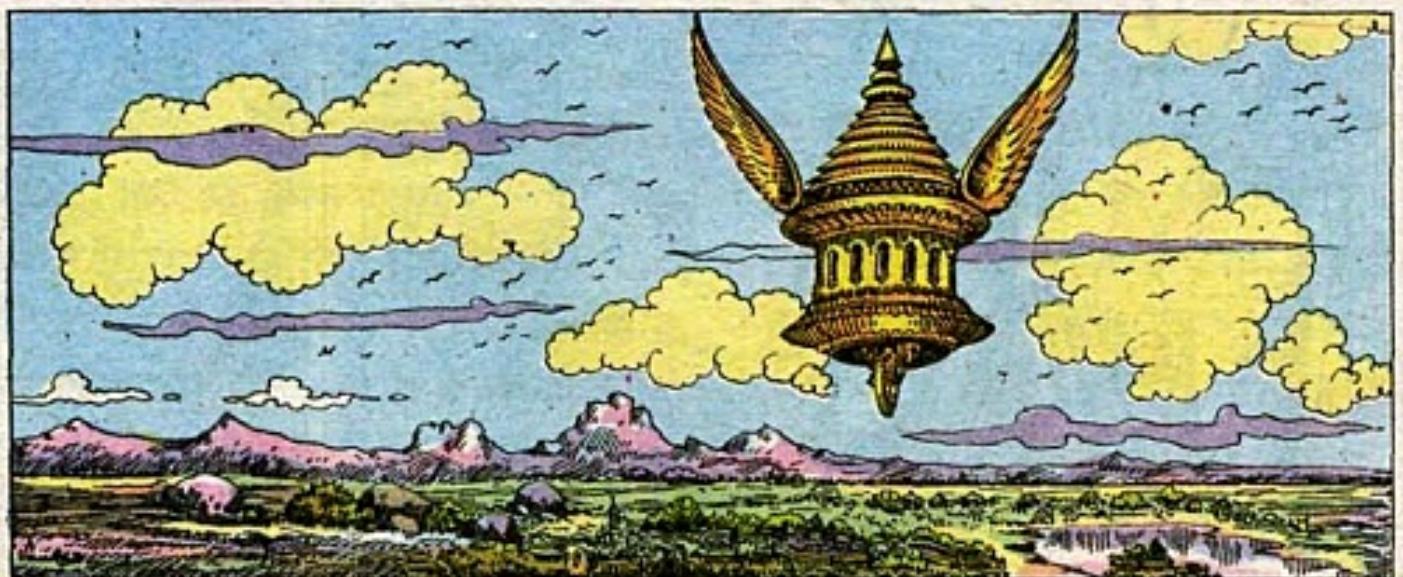
एक हज़ार एक सौ सोलह

अनूराधा की माँ उसके बचपन में ही गुज़र चुकी थी । उसके पिता ने दूसरी शादी कर ली तो वह अपनी दादी के पास ही सोलहवें साल तक पली । दादी ने बड़े प्यार से उसे पाला-पोसा ।

उसकी सौतेली माँ दुर्गा चुडैल, कर्कश स्वभाव की और झगडालू थी । पति एक दिन जब खाने बैठा तो दुर्गा ने कहा "उस बूढ़ी की झोंपडी में महारानी की तरह ज़िन्दगी गुज़ार रही है तेरी लाड़ली बेटी । लेकिन हमें ही तो हज़ारों का दहेज देकर किसी दिन उसकी शादी करानी होगी । हम यह शादी नहीं करायेंगे तो और कौन करायेगा? उसे तो कोई काम-काज आता ही नहीं होगा । दादी के लाड-प्यार ने उसे और भी विगाड़ दिया होगा । इसलिए तुम अपनी बेटी को यहाँ ले आओ । चार-पाँच साल यहाँ रखकर फिर उसकी शादी करा देंगे ।"

दुर्गा का पति उसका कठपतला था । उसे जैसे नचाती, वह नाचता था । बिना कुछ कहे वह चुपचाप अपनी पत्नी के कहे अनुसार बेटी अनूराधा को घर ले आया । वह छह साल सौतेली माँ की कड़वी--तीखी बातें सुनती हुई बेगारी करती रही और अपने भाग्य पर रोती रही । शहर में दुर्गा का भाई रहता था । राजू उसका दोस्त था । दुर्गा ने अपनी पति को यह समझाकर अनूराधा की शादी राजू से करने के लिए मनवाया कि वह कुछ दहेज लियेबिना ही यह शादी कर लेगा । दुर्गा को पहले से ही भाई के द्वारा मालूम था कि राजु छोटी-मोटी चोरियाँ करके अपनी ज़िन्दगी के दिन काट रहा है ।

शादी के पहले राजू ने कह दिया कि वह शहर में अच्छी नौकरी कर रहा है । पर शादी करके शहर आने के एक सप्ताह के अंदर ही अनूराधा जान गयी कि उसके पति

श्री.एम. कामेश्वर

की नौकरी क्या है?

"चोरी की कमाई कभी शांति और सुख नहीं दे सकती, इसिलए अच्छा यही है कि मेहनत करके कमाने का रास्ता ढूँढ़ो" अनूराधा ने अपन पति को यों बहुत समझाया, गिडगिडायी ।

अनूराधा के शहर आये छह महीने हो गये । एक दिन दादी से उसे ख़बर मिली कि वह आखिरी बार उसे देखने के लिए तरस रही है । किराये पर एक गाडी लेकर फ़ौरन वह दादी के पास गयी । वहाँ उसने देखा, दादी की दशा बडी ही दयनीय है । हड्डियों का ढाँचा लिये हुए वह खाट पर पडी हुई थी । नानी को उस स्थिति में देखकर उसकी आँखों से अनायास ही आँसू बहने लगे ।

दादी ने अनूराधा से जाना कि उसका पति कैसा आदमी है तो उसे बडा रंज हुआ । दुखी बूढ़ी ने कहा "बिटिया, अब हम कुछ नहीं कर सकते । जो हुआ सो हुआ । अब पछताने से कोई फ़ायदा नहीं । मुझे तो अच्छी तरह से मालूम हो गया है कि मेरे आख़िरी क्षण आ गये हैं । मौत मेरा इंतज़ार कर रही है । इसीलिए मैंने तुम्हें ख़बर भेजी है ।" कहती हुई तकिये के नीचे से उसने थैली निकाली और कहा "कहते हैं कि एक हज़ार एक सौ सोलह रुपये भेंट में देना शुभ होता है । यह रकम थैली में है । अपने पति से कहो कि इस रकम से वह कोई अच्छा व्यापार करे" यों कहकर उसने अनूराधा के हाथ में थैली रखी और मर गयी ।

पिताने आकर दादी की दहन-क्रिया का कार्यक्रम पूरा किया । अनूराधा अपने घर लौट आयी और पैसों की थैली अपने पति को देती हुई कहा "हमारे शुभ की कामना करते हुए दादी ने एक हज़ार एक सौ सोलह रुपये दिये हैं । उसकी इच्छा थी, और मेरी भी यह इच्छा है कि इस रकम से तुम कोई अच्छा व्यापार करो । दिल लगाओगे, मेहनत करोगे तो एक साल के अंदर ही ये दस हजार हो सकते हैं ।"

राजू ज़ोर से हँसा और बोला । "इस रकम को लेकर शाम को यों जाऊँगा और यों दस हज़ार कमाके ले आऊँगा । इसके लिए एक साल इंतज़ार क्यों करें?"

उसी शाम को थैली अपनी जेब में रखकर राजू घर से बाहर निकला । इतने में एक घोडे की गाड़ी उसके सामने आकर रुक गयी । गाड़ी के अंदर से एक आदमीने अपना सर बाहर निकालते हुए राजू से पूछा "देवी के मंदिर जाने का रास्ता कौन-सा है? आप भी उसी तरफ जा रहे हों तो आइये, गाड़ी में बैठिये । गाड़ीवाला और मैं दोनों इस जगह के लिए नये हैं ।" गाडी के अंदर के आदमी ने कहा ।

राजू गाड़ी के अंदर बैठा और गाड़ीवाले को मंदिर का रास्ता दिखाने के काम में लग गया । मंदिर के नज़दीक आते ही वह आदमी गाड़ी से उतरा । राजू को धन्यवाद दिया और जल्दी-जल्दी वहाँ से चल पड़ा । जब राजू आराम से गाडी से उतरने लगा तो उसने गाडी में एक चिट्ठी देखी । उसने वह चिट्ठी उठायी और थोडी दूर जाकर उसे पढ़ने लगा । वह चिट्ठी नीलकंठ नामक एक आदमी की, अपनी पत्नी भानुमति को लिखी हुई चिट्ठी थी ।

उसमें यों लिखा हुआ था "मैं काम पर शहर जा रहा हूँ । तुम तो कहती थी कि पच्चीस हज़ार का जो हार तुमने खरीदा वह तुम्हें पसंद नहीं आयी, इसलिए उसकी मरम्मत करवाकर दूसरी तरह की हार बनवाऊँगी । मैं जानता हुँ तुम इस समय पर देवी के मंदिर में होगी इसलिए यह चिट्ठी इस आदमी को देकर भेज रहा हूँ । उसके हाथ हार देकर भेजना । शहर जाकर दूसरा हार बनवाने का इंतज़ाम करता हूँ ।"

राजूने भानुमति के पास आकर पूछा "क्या
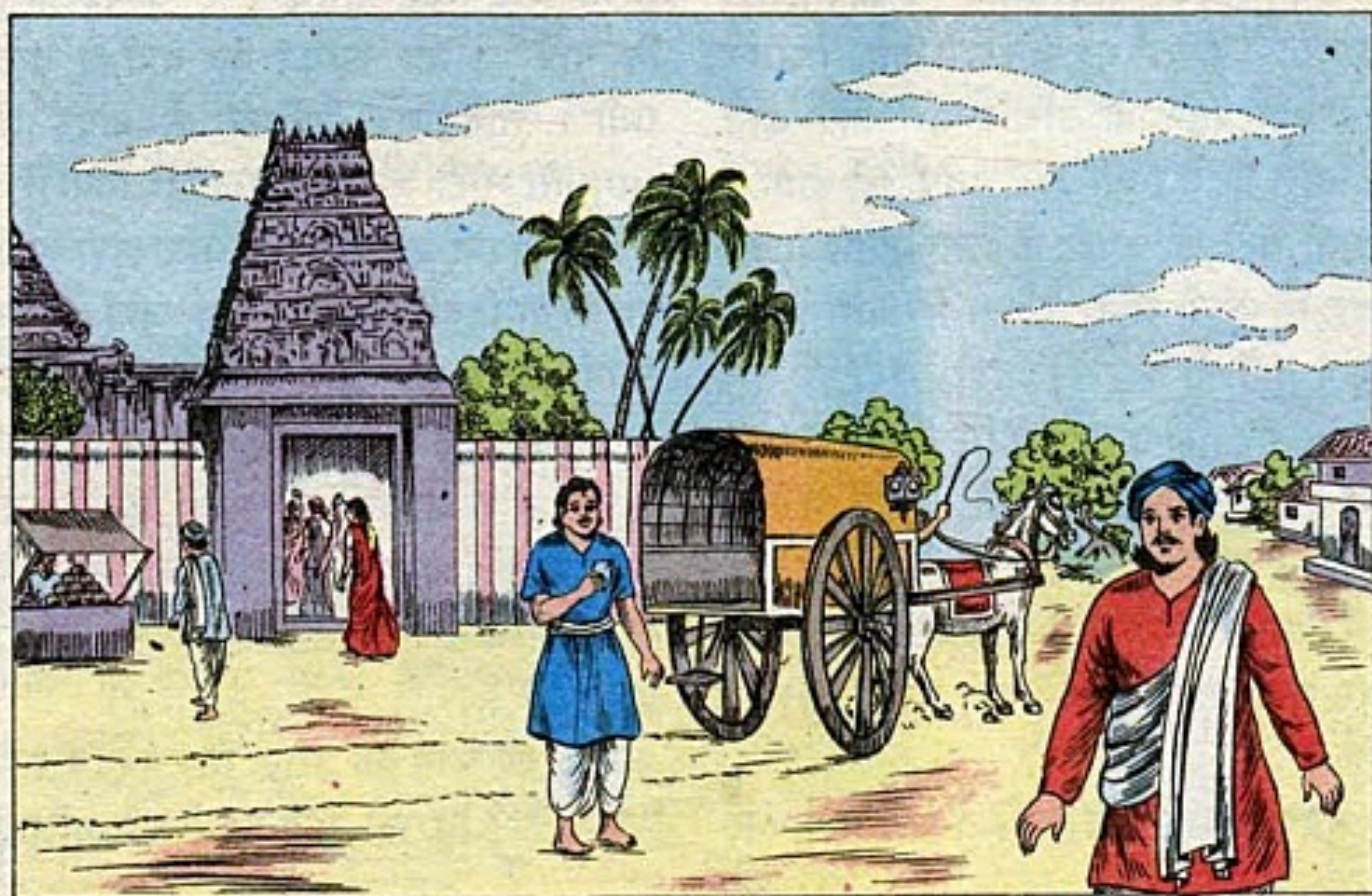
आप ही भानुमति हैं?"

उसने हाँ का भाव जताते हुए अपना सर हिलाया । राजू ने वह ख़त उसे दिया । उसने उसे पूरा पढ़ने के बाद क़हा "यहाँ आने क़े पहले ही मैने वह हार पार्वती को दीया । अपनी बेटी की शादी के लिए उसने मुझसे पंद्रह सौ रुपये माँगे, लेकिन मेरे पास इतनी रक़म नहीं थी । उसने गिडगिडाया कि तुम अपना हार मुझे दो तो इसे गिरवी पर रखकर पैसे ले लूँगी और एक दो महीनों में पैसे चुकाकर हार वापस कर दूँगी, तो मैंने हार उसे दिया । मेरे पति से बता देना कि अगली बार जहा शहर जायेंगे तब दुसरा हार ले लेंगे ।"

सुवर्ण अवसर देखते-देखते हाथ से निकल गया, इसपर राजू को तीव्र निराशा हुई । उसकी आँखों के सामने ही उसके सारे सपने टूट गये । परंतु क्षण भर में इस निराशा के बादलों में आशा की किरणें फूट पडीं । उसे एक उपाय सूझा ।

उसने भानुमती से कहा 'मालूम नहीं, मालिक फिर शहर जा पायेंगे या नहीं । इसलिए अच्छा यही होगा कि वह काम अभी पूरा करें । मेरे पास एक हज़ार एक सौ सोलह रुपये हैं । आप जिस पार्वती का जिक्र कर रही थीं, उन्हें यह रक़म देकर अपना हार ले लीजिये । मैं नीलकंठ जी से माँगकर पूरी रक़म ले लूँगा ।"

भानुमति ने राजु की दी हुई थैली ली और कहा "पार्वती का घर इस मंदिर के पीछे ही है । मैं अभी उससे पूछकर आती हूँ कि यह रक़म उसके लिए काफ़ी होगी कि नही" । यह कहकर वह वहाँ से चली ग़यी । तीन-चार मिनिटों के अंदर ही भानुमति लौटी और उसे एक हार दिया ।

राजु अपनी अक़्लमंदी पर बेहद ख़ुश था । वह परमानंद की दुकान में गया, जहाँ अक्सर अपनी चोरी का माल बेचने जाया करता था । परमानंद ने बडी तीक्षणता से हार को परखा और नाराज़ी से राजु को देखता हुआ बोला "वाह रे राजू, नक़ली सोने का हार लाकर मुझे ही चकमा देना चाहते हो" ।

राजु को लगा कि उसके सिर पर बिजली गिर पडी । निराश राजु शाम तक गलियों

में लक्ष्यहीन होकर भटकता रहा और घर पहुँचा । देखा कि घर में अंधेरा है और अनूराधा का कोई पता नहीं है । जैसे ही उसने दीप जलाया, तो मेज़ पर पड़ा अनूराधा का लिखा ख़त उसने देखा ।

उसमें लिखा था "मुझसे मेरी सहेली भानुमति और उसके पतिदेव नीलकंठ ने तुम्हारे बारे में सारी बाते सुनी हैं । तुम्हारे स्वभाव, तुम्हारी आदतें और तुम्हारे पेशे के बारे में जानने के बाद उन्होंने निर्णय किया कि तुम्हें सबक़ सिखाना चाहिये । और सबक भी ऐसा कि तुम्हें ज़िन्दगी भर याद रहे । यह सारा नाटक उन्होंने ही खेला है । चोर और धोखेबाज की पत्नी कहलवाने के बजाय अच्छा तो यही होगा कि मैं प्राण त्याग दूँ । अपने आखिरी क्षणों में मेरी दादी ने एक हज़ार एक सौ सोलह रुपये जो दिये, वे मेरी हिम्मत बांध रहे हैं । इस रक़म से दो गायें खरीद लूँगी और दूध बेचकर ईमानदारी की ज़िन्दगी गुजारुँगी तो इज्जत से रह पाऊँगी । किसी को मुझपर उँगली उठाने का साहस नहीं होगा । इसीलिए मैंने अपने गाँव जाने का निश्चय किया है । अभी भी देरी नहीं हुई, तुम अपना मन बदल लो, चोरी का यह बुरा पेशा छोड दो । अपनी अक्लमंदी का सदुपयोग करो । तुम्हें अगर विश्वास हो कि मैं सन्मार्ग पर जा सकूँगा, परिश्रम करूँगा, तो कल सूर्यास्त के पहले मेरे गाँव आ जाओ ।" ख़त पढ़ने पर राजू की आँखों पर लगी पट्टी खुल गयी । अब उसे मालूम हुआ कि अनूराधा जैसी पत्नी को पाने के बाद भी उसने अपने को ना सुधारकर उसके प्रति कितना अन्याय किया । दूसरे ही दिन सूर्योदय के पहले ही सिर झुकाकार वह अनूराधा के दरवाज़े के सामने खडा हो गया । अपने पति को पाकर अनूराधा बहुत ही हर्षित हुई ।

ईर्ष्या

एक गाँव में बलभद्र नामक एक ग़रीब किसान था। उसके बहुत-से बच्चे थे। बलभद्र हर रोज़ जंगल जाता और लकडियाँ काटकर लाता। उन्हें बेचने पर जो थोडे-बहुत पैसे मिलते थे, उनसे बच्चों को माँड पिलाता और पति-पत्नी खुद पीते। बलभद्र भरसक काम करता था, मेहनत करता था, लेकिन उससे, उसका और उसके परिवार का पेट नहीं भरता था।

एक दिन सबेरे-सबेरे बलभद्र कुल्हाडी अपने कंधे पर लिये जंगल की ओर निकला। रास्ते में धीमी-धीमी बारिश होने लगी। जंगल पहुँचते-पहुँचते मूसलधार वर्षा होने लगी। भाग्यवश उस जंगल में उसे एक उजड़ी सराय दिखायी पडी। वह दौडा-दौडा वहाँ गया, बारिश से अपने को बचाते हुए खडा रहा और इस इंतज़ार में रहा कि बारिश कब थम जायेगी?

पर वर्षा थमने का नाम ही नहीं ले रही थी। सोचा "सूखी लकडियां इस बारिश की वजह से भीग गयी होंगीं। गीली लकडियाँ ले जाऊँगा तो कोई खरीदेगा नहीं। आज तो बच्चों को वह माँड भी पिला नहीं सकूँगा।" निराश बलभद्र सराय के चारों ओर लक्ष्यहीन देखता जा रहा था। एक तरफ़ उसे एक लकडी की मूर्ति दिखायी पडी। उसे देखकर उसमें थोडी-सी आशा जगी। नज़दीक गया तो देखा कि वह एक देवी की मूर्ति है।

उसने सोचा "देवी की मूर्ति हो या देव का। आखिर यह है लकडी से बनाया हुआ। वर्षा में भीगकर गीली नहीं हुई। इसे काटूँ तो ढ़ेर भर लकडियाँ मिलेंगीं। पूरे जंगल को छान भी लूँ, इसके अलावा किसी सूखी लकडी की मिलने की उम्मीद भी नहीं है।"

ऐसा सोचकर बलभद्र ने कुल्हाडी उठायी

जी. राधा

और मूर्ति के दो टुकडे करने ही जा रहा था तो उसे मूर्ति से बातें सुनायी पडीं ''ठहरो, ठहरो, ऐ दुष्ट, मेरा सिर फोडोगे? मुझे क्या समझ रखा है?''

बलभद्र ने तुरंत कुल्हाडी नीची कर दी और मूर्ति को प्रणाम किया और बडी नीरसता के साथ कहा ''क्षमा करो माता । मैं जानता नहीं था कि तुम इसमें सजीव हो । मैंने तो सोचा कि तुम केवल लकडी की मूर्ति हो, जिसकी कोई पूजा नहीं करता । मैं लकडी काटने आया तो बारिश हुई । पूरा जंगल भीग गया । और तुम्ही को अपना आधार मानकर काटने चला तो तुम को उसमें पाया । बस, आज मुझे और मेरे बच्चों को भूखा ही रहना होगा ।''

तब मूर्ति ने कहा ''अरे, मैं तेरी दरिद्रता को समझ पायी हूँ । तुम पर मुझे कोई क्रोध नहीं है । दरिद्रता तो इससे भी अधिक घोर पाप करवाती है । तुम्हारे सुखी होने का उपाय बताती हूँ, सुनो । तुम घर जाओ और एक नया बरतन लाओ । मेरे नाम का स्मरण करके उसे खाली चूल्हे पर रखो । जैसे ही चूल्हे पर रखोगे, तुम्हें और तुम्हारे परिवार के लिए जितना खाना चाहिये, पका हुआ मिल जायेगा । आज से तुम्हें और तुम्हारे परिवार को भूखा रहने की आवश्यकता ही नहीं पडेगी । अपने बच्चों के साथ आराम से रह सकोगे ।''

बलभद्र ने अपनी कुल्हाडी दूर फेंक दी । मूर्ति को साष्टांग नमस्कार किया । वर्षा की भी परवाह किये बिना अपने घर चला गया ।

खाली हाथ लौटते हुए बलभद्र को देखकर

चाव से सब कुछ खा लिया । उन्होंने अपने जन्म में पहली बार ऐसा स्वादिष्ट भोजन किया था । पेट पूरा भर जाने से उनको गहरी नींद भी आयी ।

उस समय से बलभद्र के परिवार को खाने-पीने की कोई कमी नहीं थी । हर वक़्त उन्हें स्वादिष्ट भोजन मिलने लगा । वे खुद ही नहीं खाते थे बल्कि अगल-बग़ल के परिवार के सदस्यों को बुलाते और बडे आनंद से खिलाते थे ।

बलभद्र के घर के ही बग़ल में एक और घर था । मंडोदरी उस घर की मालकिन का नाम था । उसने देखा कि जो बलभद्र माँड के अलावा कुछ और पी ही नहीं पाता था, वह और उसका परिवार आज तरह-तरह के स्वादिष्ट पकवान खा रहे हैं, उन्हें स्वादिष्ट भोजन मिल रहा है तो सोचा "ऐसा भोजन तो हम जैसे धनियों के भाग्य में ही जब बदा नहीं है, तो ये आजन्म दरिद्र कैसे हर दिन पकवान पका पा रहे हैं? अचानक ये लोग कहाँ से इतने संपन्न हो गये? इस का क्या कारण हो सकता है?"

उसने बलभद्र के छोटे बेटे को बुलाया और पूछा "अरे छोटू, तुम्हारा बाप जंगल जाकर लकडी भी काटकर नहीं लाता । फिर खाने के ये पदार्थ कहाँ से ला रहा है? हर दिन इतने अलग-अलग स्वादिष्ट पकवान अकेली तेरी माँ कैसे पका पा रही है?"

बलभद्र के लडके ने मंडोदरी के कानों में पूरा रहस्य फूँक दिया । उसने कहा

उसकी पत्नी आश्चर्य प्रकट करती हुई बोली "लकडियाँ नहीं लाये? कुल्हाडी कहाँ गयी? आज़ हमें भूखा ही रहना होगा क्या?" । उसकी आवाज़ में बडी आतुरता व निराशा थी ।

"अब हमें लकडियों और कुल्हाडी की कोई ज़रूरत नहीं है । देवी की कृपा-दृष्टि हम पर पडी है" कहता हुआ बलभद्र ने वह सारा वृत्तांत सुनाया, जो जंगल में हुआ ।

बलभद्र की पत्नी एक नया बरतन ले आयी । उसको एक ढक्कन से ढक दिया । खाली चूल्हे पर उसे रखा और उतारा । ढक्कन खोलकर देखा तो उसमे सब प्रकार के भोजन के पदार्थ थे । तरह-तरह के पकवान थे । पति-पत्नी और बच्चों ने बडे

"जंगल की देवी की कृपा–दृष्टि हम पर पडी है। वह बरतन में, हमें जो चाहिये, दे देती हैं। हमारी माँ पकाती नहीं और हमारे बाप सामान भी नहीं लाते" कहता हुआ जंगल का सारा वृत्तांत उसे सुना दिया।

यह सुनकर मंडोदरी ईर्ष्या से जल उठी। उसने अपने सिर पर पट्टी बाँध ली और कराहती हुई एक कोने में पडी रही। रसोई नहीं बनायी, घर का कोई काम-काज नहीं किया। बच्चे उसके पास आये और रोते रहे कि खाना खिलाओ। उसने उनको गालियाँ देती हुई वहाँ से भगा दिया।

भोजन के वक़्त पर जब उसका पति घर आया तो देखा, चूल्हा ही जलाया नहीं गया है तो उसने पत्नी से पूछा "आखिर हुआ क्या है?"

रूठी मंडोदरी ने बडी रुखाई से कहा "देश में ऐरेग़ैरों पर देवी की कृपा-दृष्टि हो रही है। चूल्हा जलाये बिना ही उन्हें स्वादिष्ट भोजन प्राप्त हो रहा है और वे उन्हें बडे चाव से खा रहे हैं। और एक मैं हूँ, जो दिन भर मेहनत करती हूँ, बेगारी करती हूँ, पर क्या फ़ायदा?"

मंडोदरी से उसके पति ने पूरा ब्यौरा जानने के बाद पूछा कि बोलो, अब मैं क्या करूँ?

"अब और पूछने के लिए क्या है? कुल्हाडी लेकर जंगल जाओ और देवी को धमकी दो कि मैं तेरा सिर फोड दूँगा। उससे उस बरतन का वरदान प्राप्त करो। तुमने ऐसा नहीं किया तो जान लो, मैं खाना ही

नहीं बनाऊँगी।"

पति ने पूछा "क्रोधित होकर कहीं देवी-देवताओं का सर फोडा जाता है?"

"तुममें रत्ती भर भी ज्ञान नहीं। जो देवी प्रार्थना करने से वरदान नहीं देती उसे दंड देकर वरदान प्राप्त करना चाहिये" मंडोदरी ने कहा।

उसे मालूम था कि पत्नी का कहा उसने नहीं माना तो उसकी ज़िन्दगी में अशांति ही अशांति होगी। इसलिए उसने कुल्हाडी अपने कंधे पर डाली और जंगल की ओर चलता बना। ढूँढने के बाद उसे सराय और उसके पास उस लकडी की देवी की मूर्ति दिखायी पडी। मंडोदरी के पति ने जैसे ही देवी की मूर्ति देखी, उसे फोडने कुल्हाडी

उठायी।

दूसरे ही क्षण भूमि में कंपन हुआ। मूर्ति से पहले की तरह बिजली चमकी और उस चमक से उसकी आँखों की कांति उससे जाती रही। वह अंधा हो गया। उसे कुछ दिखायी नहीं पड रहा था। उसे लगा, किसी ने उसे लात मारी है। वह नीचे गिर पडा। उस स्थिति में उसे एक भयंकर स्वर सुनायी पडा।

"नीच, मेरा सिर फोडना चाहते थे? मुझे क्या समझ रखा है?"

मंडोदरी का पति कांप उठा। उसे लग रहा था उसका पूरा शरीर जल रहा है। उसमें आग भडक रही है।

"क्षमा करो माँ, मुझसे ऐसा अपराध हुआ है, जिसका कोई प्रायश्चित नहीं। लेकिन ऐसा करने पर ही तुमने बलभद्र पर कृपा दृष्टि फेरी है तो मुझ पर ऐसा क्रोध क्यों?" उसने कहा।

"बलभद्र आजन्म दरिद्र है। तुम तो दरिद्र नहीं हो। तुम्हें क्यों क्षमा करूँ?" मूर्ति ने कहा।

"वह दरिद्र हो तो मैं अज्ञानी हूँ। क्षमा करो माँ" कहता हुआ वह पेट के बल गिरकर रोने लगा।

"एक शर्त पर तुम्हें इस बार क्षमा करती हूँ। बलभद्र के बरतन में सब पकवानों की उपलब्धि, हो ऐसा वरदान मैंने उसे दिया है। किन्तु उसमें घी का देना भूल गयी हूँ। वे बेचारे घी के बिना हर दिन खाना खा रहे हैं। इसलिए तुम हर दिन उनके घर जाओ और उन्हें एक-एक सेर की अच्छी घी देते रहना।" मूर्ति ने कहा।

'तुम्हारी जैसी इच्छा माँ। मैं ऐसा ही करूँगा। पर हाँ, ग़लती माफ़ कर दो माँ।' मंडोदरी के पति ने कहा। अब उसकी सारी पीडाएँ दूर हो गयीं। घर आकर उसने अपनी पत्नी को जो हुआ, सब कुछ सुनाया और कहा "यह किसी ने कितना सच कहा है कि 'स्त्री बुद्धि प्रलयाँतकहः'। अब से हर रोज़ एक सेर अच्छी घी बलभद्र के घर भेजा करो।"

वह कर क्या सकती थी? पति के कहे अनुसार हर दिन सेर अच्छी घी बलभद्र के घर भेजा करती थी।

—२५ वर्ष पहले प्रचुरित चंदामामा की कहानी-

प्रकृति : रूप अनेक

सोने के पेड़

"एक हज़ार रुपये भरिये और एक सागवान रोपिये । बीस साल तक उनकी देख-भाल करके उन्हें बडा बनाने की जिम्मेदारी हम पर छोडिये । बीस सालों के बाद आपको सौ गुना अधिक याने लाख रुपये मिलेंगे ।" इस प्रकार के विज्ञापन आजकल बहुत ही देखने को मिल रहे हैं । इसका मतलब यह हुआ कि सागबान लकडी की क़ीमत सोने के बराबर है । यही नहीं, थायलॉड के दो अनुसंधानको सागबान को सोना मानते हैं । 'न्यूट्रान एवियेशन' नामक टेकनिक का उपयोग करके, जिन सागबान पौधों को उन्होंने आरे से काटा, उसके चूर्ण में सोने के कण पाये । इस प्रकार के पौधों को नाम दिया 'साक तांग' । थायभाषा में 'साक' का मतलब है सागबान । 'तांग' का अर्थ है सोना । दक्षिण भारत में कुछ लोग सोने को

'तंगम' कहते हैं ।
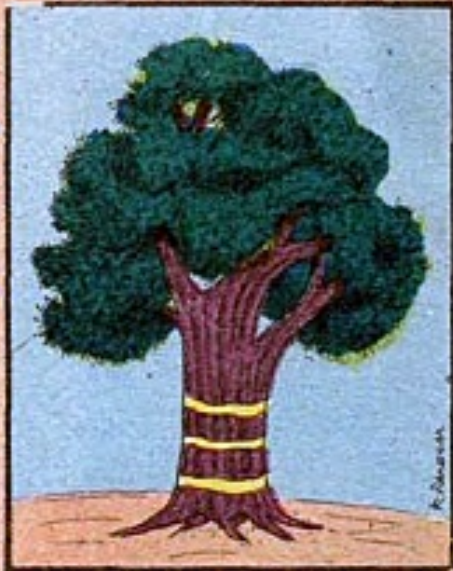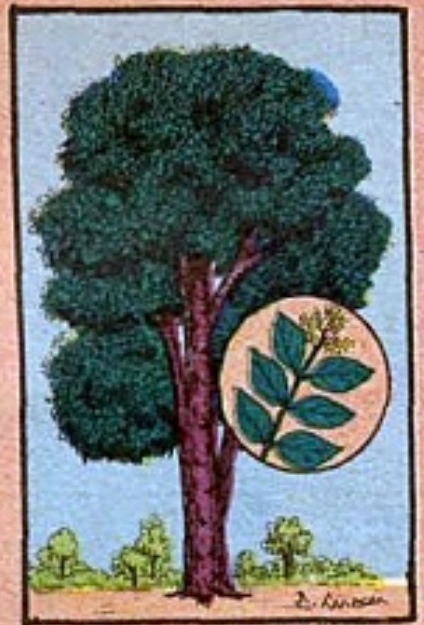
पेड़ो को वलय

आजकल तरहे-तरह की संस्थाएँ स्थापित हो रही हैं । लेकिन आपने क्या कभी सुना है कि एक संस्था है, जिसके सदस्य पेड़ मात्र हैं । उत्तरप्रदेश में 'एलैट मदर ट्रीस' नामक संस्था की स्थापना की गयी है । नीम, बाबुल, जामून, अमिया, देवदर, शिशम, इमली आदि की नस्लों से संबंधित करीबन ३,५०० पेड़ इस संस्था में सदस्य हैं । इस संस्था में जिन पेड़ों को सदस्यता प्राप्त हुई है, उन्हें स्वस्थ बीज पहुँचाने के लिए प्रत्येक सुरक्षा का प्रबंध किया गया है । इस संस्था में सदस्य बनना हो तो यह आवश्यक है कि वे पेड़ देखने में तंदुरुस्त लग रहे हों, नाले सीधे हों, समृद्ध डालियाँ हो, घने पत्ते हों । ऐसे पेडों को 'मदर ट्रीस, कहते हैं । सदस्यता प्राप्त हर पेड़े के चारों ओर पीला वलय डाला जाता है । उसके बाद उनके बीजों से अंकर उत्पन्न किये जाते हैं । उनकी परीक्षा होती है । इन परीक्षाओं में जो पेड़ खरे उतरते हैं उन्हें 'एलैट मदर्स' कहकर पुकारते हैं । ऐसे वृक्षों के चारों ओर दो वलयों के निशान लगाते हैं । उनके बीज दूसरी जगह भेजे जाते हैं । जब मालूम होता है कि ये बीज शक्तिशाली हैं, इसमें से फूटनेवाले अंकुर स्वस्थ हैं, तब ऐसे पेड़ों के चारों ओर तीसरा पीला वलय डाला जाता है ।

ऊँचा वृक्ष

कालिफोरनिया के हंबोल्ट स्टेट पार्क में स्थित सीर्रा लाल चंदन वृक्ष की ऊँचाई ११३ मीटर है । कहा जाता है कि यही वृक्ष संसार के समस्त वृक्षों से ऊँचे से ऊँचा है । इसका नाम रखा गया है हारी कोल । १९८८ में पाये गये इस वृक्ष के चारों ओर के वलयों के निशानों को देखने पर बताया गया है कि इसकी उम्र तीन हज़ार की होगी । आस्ट्रेलिया के विक्टोरिया में जो यूकलिप्टस का पेड है, उसे ऊँचा पेड माना जाता था । पर कहा जाता है कि वहीं एक दूसरा यूकलिप्टस का वृक्ष था, जिसकी ऊँचाई १४३ मीटर है ।

आपका बच्चा और कून
आप उनको कभी अलग नही कर सकते।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां सितम्बर, १९९३ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

M. Natarajan

T.C. Jain

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ १० जुलाई'९३ तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००-/ का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.**

मई, १९९३, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **देख अप्पू हाथी की ऊँचाई!**

दूसरा फोटो : **छोटी बिटिया है मुरझायी!!**

प्रेषक : रवि गुप्त मौर्य

Lohata-p.o, Varanasi Dt (U.P.)

पुरस्कार की राशि रु. १००/- इस महीने के अंत में भेजी जाएगी ।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

"चमचम निब और जादू सरपट,
कॅम्लिन कर दे मेरा होमवर्क झटपट."

छोटा पाशा का जादू - कॅम्लिन
फाउण्टेन पेन. इसकी बेहतरीन
निब से लिखाई हो बढ़िया और कितनी
जल्दी भी! तभी तो छोटा पाशा का
होमवर्क ख़त्म हो जाए चुटकी बजाते.
और खेलने को मिले ढेर सारा वक्त.

तुम्हारा सच्चा साथी.

Contract.CL.922.93.Hn

TERRRRIFIC
YOU'LL SIMPLY LOVE
THE FRUIT IN IT
FREE!
Send 20 Nutrine Soft Hearts wrappers for a FREE Bunny mask* to Nutrine Confectionery Co. Ltd., No. 7, 17th Avenue, Harrington Road, Madras 600 031.
Soft Hearts
nutrine
Soft Hearts
JUICY, CRUNCHY, FRUITY, TREATS
nutrine
The widest smile